महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा

बी.एड.(दूर शिक्षा)

स्व: अधिगम सामग्री

जेंडर, विद्यालय और समाज (शिक्षा 045)

दूर शिक्षा निदेशालय

उद्देश्यः इसके द्वारा सेवारत शिक्षकों को जेण्डर विमर्श के विभिन्न पक्षों से परिचित कराया जाएगा। वे विद्यालय, समाज और जेंडर के परिप्रेक्ष्य के प्रति आलोचनात्मक दृष्टि का विकास कर सकेगें।

इकाई 1: परिचयः जेंडर, लिंग, पितृसत्ता, स्त्रीत्व और पुरूषत्व; जेंडर रूढ़ीवाद; जेंडर के मनोसामाजिक परिप्रेक्ष्यः धुर नारीवादी (रैडिकल), समाजवादी नारीवादी

इकाई 2:जेंडर आधारित समाजीकण की प्रक्रियाः जेंडर आधारित पहचान के विकास में परिवार, समुदाय, विद्यालय और अन्य सामाजिक संगठनों कृत समाजीकरण की भूमिका का आलोचनात्मक अध्ययन, भारतीय सन्दर्भ में हुए नृजातीय अध्ययन

इकाई 3: लड़कियों की शिक्षाः असमानता और प्रतिरोध, भारत में महिला शिक्षा का इतिहास; भारत में लड़कियों की शिक्षा की वर्तमान स्थिति व चुनौतियाँ, शिक्षा के अवसरों की असमानता की व्याख्या स्त्रीवादी दृष्टिकोण से; मीडिया और अन्य लोकप्रिय माध्यमों की भूमिका का विश्लेषण

इकाई 4: विद्यालयों में जेंडर असमानताः स्कूली अनुभवों जैसे पाठ्यचर्या , शिक्षणशास्त्र और विद्यालयी गतिविधियों की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या; जेंडर के सन्दर्भ में प्रच्छन्न पाठ्यक्रमः कक्षागत प्रक्रियाओं द्वारा जेंडर-रूढियों का पुनर्बलन; जेंडर संवेदनशील शिक्षा शास्त्र, जेंडर की दृष्टि से विद्यालयी अनुभवों पर मनन और युक्तियाँ; शिक्षकों की संवेदनशीलता

इकाई - 1
परिचय: जेंडर

इकाई 1: परिचय: जेंडर

इकाई की संरचना

1.0. उद्देश्य
1.1. प्रस्तावना
1.2. जेंडर
1.3. लिंग
1.4. पितृसत्ता
1.5. स्त्रीत्व और पुरूषत्व
1.6. जेंडर रूढ़ियाँ
1.7. जेंडर के मनोसामाजिक परिप्रेक्ष्य
  1.7.1. धुर नारीवादी (रैडिकल)
  1.7.2. समाजवादी नारीवादी
1.8. सारांश
1.9. अपनी प्रगति के जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर
1.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

1.0. उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरांत आप-

1. जेंडर की अवधारणा को समझ सकेंगे।
2. जेंडर एवं लिंग की की अवधारणा की व्याख्या कर सकेंगे।
3. पितृसत्ता एवं इसमें निहित विषमताओं को जान सकेंगे।
4. स्त्रीत्व और पुरूषत्व के अवधारणाओं का आलोचनात्मक अध्ययन कर सकेंगे।
5. जेंडर रूढ़िवाद सहित समाज में निहित विषमताओं का विश्लेषण कर सकेंगे।
6. धुर नारीवादी (रैडिकल) एवं समाजवादी नारीवादी दृष्टीकोण को समझ सकेंगे।

1.1. प्रस्तावना

जेंडर महिलाओं का मुद्दा नहीं अपितु यह सभी लोगो का मुद्दा है। स्त्रीत्व को पुरुषत्व से अलग रखकर नहीं समझा जा सकता। जिस प्रकार सिक्के के दो पहलु होते है उसी प्रकार महिला एवं पुरुष एक ही सिक्के के दो पहलू है। एक की रचना एवं क्षमता दूसरे की रचना एवं क्षमता को प्रभावित करती है। नैसर्गिक सच्चाई है कि सृष्टि की रचना नर एवं मादा अथवा स्त्री व पुरुष से हुई है। दोनों ही रचना विधान में

महत्वपूर्ण है | किसी एक के द्वारा यह संसार नहीं बसाया गया है | उतना ही यह भी सत्य है की शारीरिक गठन मजबूत होने के कारण पुरुष ने प्रकृति के क्रिया कलापों एवं जीव जंतु आदि पर धीरे धीरे अधिकार कर लिया | इसलिए विश्व के किसी भी छोर में नारी पुरुष से दबी हुई व उसके या अधीन रही है | जेंडर सम्बन्ध ना ही प्राकृतिक है और न प्रदत्त, यह तो निर्मित है ताकि असमान सम्बन्ध प्राकृतिक नजर आये और इसे केवल प्राकृतिक समाज के दबाव में ही बनाया जा सकता है| इस प्रकार लड़के एवं लड़कियों पर समाज के द्वारा बनाये गए स्त्रीत्व एवं पुरुषत्व के नियमों का दबाव होता है |जेंडर सर्वाधिक प्रचलित असमानता का प्रकार है जो सभी स्तर, जाति एवं समुदाय में क्रियाशील है | जेंडर सभी अनुशासनों से जुड़ा हुआ है, यह ज्ञान निर्माण के मूल में विद्यमान है और यह सामान्यतः मानव संबंधो में निहित है एवं इसका शिक्षा में विशिष्ट स्थान है | आज के इस आधुनिक युग में जेंडर के प्रति संवेदनशीलता का विकास करना शिक्षा के मुख्य उद्देश्यों में से एक है |

1.2. जेंडर

तीन दशकों से भारत में जेंडर, निति निर्धारण एवं पाठ्यचर्या निर्माण में एक महत्वपूर्ण अवयव रहा है | जेंडर को मुख्यतया लडकियों या स्त्री के परिप्रेक्ष्य में रखकर ही देखा गया है | इसे एक वियुक्त वर्ग के रूप में देखा गया है जो किसी भी मुद्दों से अलग है | उन्हें समान सुविधायें देने के सन्दर्भ में भी देखा गया है | शिक्षा में जेंडर समानता एक जटिल सोच है जो शिक्षा की प्रकृति एवं गुणवत्ता से जुडी है और इस बात पर केन्द्रित है कि किस प्रकार शिक्षा, लड़कियों को अपने पसंद के विकल्प को चुनने एवं अपने अधिकारों के लिए खडे होने में सक्षम बनाती है |

जेंडर एक सामाजिक संवर्ग कोटि है जो की जैविक नहीं है | समाज ने व्यक्ति के लिए मुखौटा के रूप में लिंग आधारित कुछ विशेष कार्य सौप दिए है जैसे एक महिला या पुरुष को समाज में कैसा व्यवहार करना है | जिसके कारण यह विशिष्ट वर्गों में विभाजित है अन्यथा यह जैविक वर्ग ही रहता | जेंडर का संबंध एक ओर पहचान से है तो दूसरी ओर सामाजिक विकास की प्रक्रिया के तहत स्त्री-पुरुष की भूमिका से। जहाँ मनुष्य और मनुष्य के बीच अंतर किया गया और एकको स्त्री और दूसरे को पुरुष कहा गया। जेंडर के संबंध में विस्तार से बात करने से पहले कुछ बातें विमर्श के संदर्भ में हो जाएं। सरल शब्दों में कहा जाए तो यह एक सूचना है जो ज्ञान के रास्ते से होकर गुजरता है और हमें सोचने समझने का नजरिया देता है। कमला भसीन के अनुसार 'जेंडर सामाजिक-सांस्कृतिक रूप में स्त्री-पुरुष को दी गई परिभाषा है, जिसके माध्यम से समाज उन्हें स्त्री और पुरुष दोनों की सामाजिक भूमिका में विभाजित करता है। यह समाज की सच्चाई को मापने का एक विश्लेषणात्मक औजार है'। मैत्रयी कृष्णराज लिखती हैं समाज में जितनी भी आर्थिक और राजनैतिक समस्याएं हैं उनका संबंध जेंडर से है। 'जेंडर लिंग आधारित श्रम का विभाजन हैं जिसे पितृसत्ता ने सामाजिक अनुशासनों के द्वारा तय किया, जिसकी संकल्पना को परिवार और आर्थिक आधार पर खोजना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त जेंडर एक

विश्लेषणात्मक श्रेणी है जो सामाजिक संरचना व उसके जटिल व्यवहारमूलक संबंधों को स्त्रीपुरुष के बीच के संबंधों से जानने का प्रयास करता है'। शर्मिला रेगे जेंडर को विचार की प्रक्रिया मानती हैं साथ ही ऐसा वर्ग है जिसमें कुछ संबंधों को रखा जाए और उनसे निर्मित संबंधों को जाना जा सके। उमा चक्रवर्ती भी सामाजिक संरचना को स्त्री की निर्मिती का कारण मानती हैं–'स्त्री का परिवेश उसकी पराधीनता की प्रकृति को तय करता रहा है'।

जेंडर की पहचान

1. व्यावहारिक कार्य क्षेत्र के आधार पर।
2. व्यवसाय के आधार पर।
3. धर्म के आधार पर।
4. जैविक तत्व के आधार पर।
5. गुणत्व के आधार पर।
6. सांस्कृतिक आधार पर।

जेंडर के निर्माण में सहायक

1. अभिभावक।
2. परिवार।
3. समुदाय।
4. समाज।
5. खेल।
6. सामाजिक तौर तरीके।
7. विद्यालय।

जेंडर में भिन्नता के कारण

1. अशिक्षा।
2. पितृसत्ता।
3. गरीबी।
4. रुढ़िवादी विचारधारा।
5. धार्मिक।

जेंडर के समीक्षात्मक पक्ष को जब हम देखते है तो यह समझ विकसित होती है कि –

- जेंडर महिला एवं पुरुष को अलग एवं असमान भूमिका में रखती है और विशेष विशेषण, स्त्रीलिंग एवं पुल्लिंग आवंटित करती है।

- व्यावहारिक रूप से यह स्त्रीलिंग एवं पुल्लिंग को कार्य एवं विशेषण के आधार पर विभाजित करती है जो कि असमान सम्बन्ध को प्राकृतिक दिखाती है ।
- जेंडर निर्मित है न की प्रदत्त अगर हम अपना परिप्रेक्ष्य बदल दे तो हम यह महसूस करेंगे की जेंडर असमानता न हो कर प्रभुत्व की अवधारणा बन गयी है और तब जेंडर प्राकृतिक से प्रश्नात्मकता की ओर जाती है ।
- जेंडर सम्बन्ध स्थिर नही है,यह संस्कृति एवं समय के अनुसार बदलती रहती है । यह गतिशील है और स्त्रीत्व एवं पुरुषत्व की नई परिभाषाएं समय और परिस्थिति को अनुसार गठित करती रहती है ।

इस प्रकार जेंडर की प्रकृति को देखते हुए हम कह सकते है की जेंडर की अवधारणाओं को बदलने में शिक्षा एक विशिष्ट उपकरण के रूप में कार्य कर सकती है ।

अपनी प्रगति की जाँच करे -1

1. जेंडर से आप क्या समझते है ?

   ....
   ....
   ..
2. जेंडर निर्माण में सहायक कारक कौन कौन से है ?

   ....
   ....

1.3. लिंग

'लिंग' सामाजिक-सांस्कृतिक शब्द हैं, जो सामाजिक परिभाषा से संबंधित करते हुये समाज में 'पुरुषों' और 'महिलाओं' के कार्यों और व्यवहारों को परिभाषित करता हैं, जबकि, 'सेक्स' शब्द 'आदमी' और 'औरत' को परिभाषित करता है जो एक जैविक और शारीरिक घटना है। अपने सामाजिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक पहलुओं में, लिंग पुरुष और महिलाओं के बीच शक्ति से कार्य का संबंध हैं जहाँ पुरुष को महिला से श्रेष्ठ माना जाता हैं। इस तरह 'लिंग' को मानव निर्मित सिद्धान्त समझना चाहिये, जबकि 'सेक्स' मानव की प्राकृतिक या जैविक विशेषता हैं।

लिंग असमानता को सामान्य शब्दों में इस तरह परिभाषित किया जा सकता हैं कि, लैंगिक आधार पर महिलाओं के साथ भेदभाव। समाज में परम्परागत रुप से महिलाओं को कमजोर जाति-वर्ग के रुप में मान्यता दी जाती हैं। वह पुरुषों की एक अधीनस्थ स्थिति में होती है। वो घर और समाज दोनों में

शोषित, अपमानित, अक्रमित और भेद-भाव से पीड़ित होती हैं। महिलाओं के खिलाफ भेदभाव का ये अजीब प्रकार दुनिया में हर जगह प्रचलित है और भारतीय समाज में तो बहुत अधिक है।

अब यदि सामाजिक संदर्भों में इसे देखने का प्रयास करें तो जेंडर का संबंध लिंग(सेक्स) से है या कहा जा सकता है कि आज भी जेंडर को लिंग ही माना जाता है। जिस तरह भाषा में शब्दों के वर्गीकरण के लिए उनके सामाजिक व्यवहार को आधार बनाया गया और उन्हें स्त्रीलिंग, पुल्लिंग वनपुंसकलिंग के रूप में विभाजित किया गया उसी प्रकार सामाजिक संरचना में 'लिंग' को सामाजिक प्रकिया के तहत स्त्री और पुरुष की निर्धारित भूमिकाओं में ढाला गया। स्त्री और पुरुष दोनों ही जैविक संरचना हैं यह सत्य है इन्हें बदला नहीं जा सकता। लेकिन इनकी पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक भूमिका का निर्धारण जब किया जाता है तो इनके अपने स्वतंत्र अस्तित्व पर प्रश्न अंकित हो जाता है, जिसका जवाब जेंडर देता है। यह केवल लिंगों के बीच के अंतर को नहीं बताता वरन सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक स्तर पर सत्ता से इसके संबंध को भी परिभाषित करता है, सत्ता से लिंग व जेंडर का संबंध केवल आज के संदर्भों को ही नहीं बताता बल्कि इतिहास में स्त्री की भूमिका से उसे जोड़कर देखता है।

अपनी प्रगति की जाँच करें 2

3.लिंग व जेंडर में अंतर स्पष्टकरें ?

....

....

1.4. पितृसत्ता

प्राचीन काल से भारतीय समाज पुरुष प्रधान समाज रहा है | समाज में प्रचलित रीति रिवाजो के कारण पितृसत्ता आज भी विराजमान है | समाज में मानव जाति को दो वर्ग में बाटा गया है – 1. पुरुष वर्ग 2. महिला वर्ग | चाहे वह सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, व्यावहारिक आदि कोई भी क्षेत्र हो हर जगह यह लिंग भेद नज़र आता है | प्राचीन काल से 3000 वर्षों से हम देखे तो हमारे वेदों, ग्रन्थों, पुराणों में सभी जगह हमें पुरुष की प्रधानता के प्रमाण मिलते है | महिला की स्थिति प्राचीन काल से लेकर आज तक विचारणीय है |

पुरुष को समाज में, परिवार में सभी जगह पर प्रधान माना जाता था जैसे किसी नगर का शासक पुरुष होता था | नारी को शुरू से ही दासी के रूप में प्रदर्शित किया गया है | जिसका प्रमुख कार्य अपने परिवार एवं समाज के नियमों, आदर्शों का आस्था के साथ पालन करना तथा परिवार के अन्दर रहकर बच्चों की देख भाल करना था | नारी का शोषण प्राचीन समय से ही होता आ रहा है | सभी धर्मों में नारी का स्थान अत्यंत दयनीय था |उनको हमेशा हेय या निम्न दृष्टि से देखा जाता था | जैसे हिन्दू धर्म में पूजा-पाठ के पंडित, मुस्लिम में मौलाना (मुल्ला) सिक्ख में गुरु, ईसाई में पोप (फादर) यह सभी उदाहरण

समाज में पुरुष की प्रधानता को प्रदर्शित करते है | समाज की दृष्टि से महिला का जन्म केवल घर के काम-काजों के लिए हुआ है | समाज में व्याप्त कई रीति-रिवाज जैसे पिंड दान करना, अंतिम संस्कार, उपनयन संस्कार आदि पुरुषों को करने का अधिकार है महिलाओं को नहीं|

जब परिवार में कोई लड़की जन्म लेती है तो उसका लालन-पालन लड़को से अलग होता है | उसे लड़को से कमज़ोर समझा जाता है | उसे अगर बाज़ार भी जाना होता है तो उसके साथ उसके भाई या पिता जाते है। अतः परिवार ही लड़कियों को यह अहसास करता है की वे कमज़ोर है जिससे उन्हें दूसरो पर निर्भर होने की आदत पड़ जाती है इस प्रकार परिवार ही लिंगीय भेद को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है |

"पितृसत्ता शब्द अंग्रेजी के पैट्रीआर्की का हिंदी रूपांतरण है | जो पैट्रीओक से बना है | पैट्रीआर्क का अर्थ प्राधिधर्माध्यक्ष होता है |

सीमन द बुअर के अनुसार "औरत जन्म नहीं लेती बल्कि बना दी जाती है |"

पितृसत्ता से आशय " परिवार में पिता की सर्वोच्चता तथा उसके प्रशासन की प्रमुखता को दर्शाते है"–**फायरस्टोन**

पितृसत्ता की भूमिका

1.संपत्ति का अधिकार – परिवार में लड़कियों एवं लड़को में संपत्ति का अधिकार बराबर नहीं होते |

2. लड़की होना – लड़कियों को शुरू से ही पराया धन समझा जाता है | निम्न दृष्टि से देखा जाता है | शादी के लिए कोई चुनाव नहीं होता|

3. शिक्षा में जेंडर – लड़कों को तकनीकी कौशल के लिए शिक्षा दी जाती है | लड़कियों को सिलाई बुनाई का प्रशिक्षण दिया जाता है|

4.लड़की की पवित्रता – परिवार में लड़कियों का दृश्य एक खूबसूरत एवं शुद्धता के रूप में देखा जाता है इसलिए उसको परिवार के आदर्शों, नियमों की शिक्षा दी जाती है |उसको घर के कामो के लिए तैयार किया जाता है | लड़की को उपलब्धि प्राप्त करने की नज़र से नहीं देखा जाता है एवं उनसे यह अपेक्षा की जाती है की वे अपनी जिम्मेदारियों का पालन ईमानदारी से करें |

इस प्रकार पितृसत्ता की भूमिका निम्न जगह पर देखी जा सकती है –

1. परिवार में।
2. विद्यालय में।
3. हिंसा में।
4. आर्थिक संरचना में।
5. समाज में।

6. शिक्षा में।

7. प्रशासन में।

8. यौन शोषण में।

इस प्रकार हम देखते है की आज भी पितृसत्ता की भूमिका हमारे समाज में विद्यमान है।

नारीवाद की जड़े पितृसत्तात्मक व्यवस्था में है। इस व्यवस्था मे पुरूष का एकाधिकार स्त्री, बच्चों व परिवार के अन्य सदस्यों पर होता है। नारी पर उसका वर्चस्व कठोर रूप मे रहता है। वह उसकी अनुमति के बगैर कुछ नहीं कर सकती है। स्त्री पुरूष के अधीन रहकर परिवार का कार्य करती है। वर्चस्व की इस धारणा का साधारणीकरण नहीं करना चाहिए। बहुत से ऐसे परिवार मिलते हैं जहां नारी पर पुरूष का दबाव न के समान होता है। फिर भी समाज मे यह एक आम धारणा बन गई है कि पुरूष, स्त्री से अनेक मामलों में श्रेष्ठ है। उमा चक्रवर्ती पितृसत्तात्मक व्यवस्था के संबंध मे लिखती है, ''पितृसत्ता को, जिसके जरिए अब संस्थाओं के एक खास समूह को पहचाना जाता है, सामाजिक संरचना और क्रियाओं की एक ऐसी व्यवस्था के रूप मे परिभाषित किया जाता है, जिसमें पुरूष का स्त्रियों पर वर्चस्व रहता है और वे उनका शोषण व उत्पीड़न करते है। पितृसत्ता को एक व्यवस्था के रूप में देखना बेहद महत्वपूर्ण है क्योंकि इससे पुरूष और स्त्री के बीच शक्ति एवं हैसियत में असमानता के लिए जैविक निर्धारणवाद (बायोलाजिकल डिटरमिनिज्म) के मत को खारिज करने मे सहायता मिलती है। साथ ही यह भी स्पष्ट होता है कि स्त्री और पुरूष का वर्चस्व कोई व्यक्तिगत घटना नहीं बल्कि यह एक व्यापक सरंचना का अंग है।'' इसमें कोई दो मत नहीं है कि पितृसत्ता के बीज आर्थिक-सामाजिक संरचना में ही मौजूद हैं। पृथक् से ऐसी कोई चीज नहीं है, जो नारी पर थोपी गई है, बल्कि यह उस सरंचना और व्यवस्था का अभिन्न अंग बन गया, जिस पर पुरूष की सत्ता आर्थिक संसाधनों पर काबिज हो गई और स्त्री उसके अधीन बन गई। यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि अर्थ रूप में जो भी शक्तिशाली होता है वह समाज और विभिन्न संस्थाओं पर अधिकार कर लेता है। यह कल भी सत्य था और आज भी किसी सीमा तक सत्य है, क्योंकि अनेक आर्थिक-सामाजिक बदलावों के बावजूद भारत मे पूंजीवादी व्यवस्था स्थापित हो चुकी है। उमा चक्रवर्ती सवर्ण पितृसत्ता के संबंध मे लिखती हैं ''ब्राह्मणवादी पितृसत्ता नियमों और संस्थाओं का एक ऐसा समूह है, जिसमे जाति और (जेंडर) एक-दूसरे से सम्बन्धित हैं और परस्पर एक-दूसरे को आकार प्रदान करते हैं और जहां जातियों के बीच की सीमाएं बनाए रखने के लिए महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण हैं। इस ढांचे के पितृसत्तात्मक नियम सुनिश्चित करते हैं कि जाति व्यवस्था को बंद सजातीय यौनविवाह संबंधों के जातिक्रम का उल्लंघन किए बिना बनाए रखा जा सकता है। महिलाओं के लिए ब्राह्मणवादी पितृसत्तात्मक कानून उनके जातीय समूहों के अनुरूप एक-दूसरे से भिन्न होते हैं, जिसमें महिलाओं की यौनिकता पर सबसे कठोर नियंत्रण ऊंची जातियों में पाया जाता है। ब्राह्मणवादी पितृसत्ता के कायदे-कानून अक्सर शास्त्रों से लिए जाते है। ये विशेषकर उच्च जातियों को वैचारिक आधार प्रदान करते हैं, लेकिन कई बार उन्हें निचली जातियों द्वारा भी आत्मसात कर लिया जाता है'' वास्तव मे यदि समाज के

उच्च शिक्षित सवर्ण महिलाओं के पारिवारिक ढांचे तथा महिलाओ के क्रिया कलापों का विश्लेषण किया जाए तो इन परिवारों की स्त्रियां अनेक प्रकार की बंदिशो से बंधी होती हैं। वे धनी होते हुए भी आर्थिक रूप से पति पर निर्भर रहती है। धर्म के कठोर नियमों का लबादा इतना भारी होता है कि उतार फेंकने का साहस जल्दी नहीं होता।

अपनी प्रगति की जाँच करें 3

1. पितृसत्ता से आप क्या समझते है ? समाज में इसकी भूमिका की व्यख्या कीजिये।

   ....

   ....

1.5. स्त्रीत्व और पुरूषत्व

जेंडर विभाजन की प्रक्रिया के तीन रूप स्त्रीलिंग ,पुल्लिंग और नपुंसकलिंग/उभयलिंग (Neuter Gender) का प्रयोग मिलता है तो हिंदी में स्त्रीलिंग व पुल्लिंग केवल दो रूपों का प्रयोग मिलता है वहीं वैदिक संस्कृत में देखते हैं तो एक तीसरा लिंग नपुंसकलिंग(उभयलिंगी) का प्रयोग भी भाषा में देखा जा सकता है। पश्चिम में तीसरे न्यूटर जेंडर विभाजन का आधार स्त्रीत्व व पुरुषत्व के समाज में निर्धारित गुणों से अलग स्वतंत्र पहचान का होना था, तो वहीं संस्कृत में तीसरे लिंग से अभिप्राय स्त्रीत्व व पुरुषत्व के गुणों का साथ होना था। जो आज भी भाषाविज्ञान में देखा जा सकता है। स्त्रीत्व व पुरुषत्व शब्दों के प्रयोग के संदर्भ में अरस्तु ने कहा कि 'ग्रीक विचारक 'प्रोटागोरस' ने ही भाषा में स्त्रीत्व, पुरुषत्व और न्यूटर (Neuter) शब्दों का प्रयोग संज्ञा के वर्गीकरण के संदर्भ में किया'। भाषा में जेंडर की यह विभाजन प्रक्रिया व्यवहार मूलक थी जैसा कि चार्ल्स होकेट ने कहा 'शब्दों के व्यवहार के आधार पर संज्ञा का वर्गीकृत विभाजन जेंडर है'। भाषा के संदर्भ में भले ही जेंडर का प्रयोग शब्दों के व्यवहारमूलक प्रयोग पर आधारित था लेकिन सामाजिक संदर्भों को भी भाषा से अलग करके नहीं देखा जा सकता।

स्त्रीत्व की विशेषक

- नम्रता पूर्वक बातें करना।
- शालीन पोषक।
- घरेलू या पारिवारिक कार्य करने में दक्ष।
- घर से बाहर निकलने का विशेष समय होता है।
- मातृत्व गुण

- भावुक होती है आदि जैसे विशेषक स्त्रियों के साथ जुडी होती है ।

पुरुषत्व की विशेषक

- पुरुष स्त्रियों की अपेक्षा कम रोते हैं।
- प्रभुत्ववादी होते है।
- घर से बाहर निकलने का विशेष समय नहीं होता है ।
- ये स्त्रियों के अपेक्षा कम भावुक होते है ।
  ये सभी विशेषताएं स्त्रीत्व एवं पुरुषत्व से जुड़े होते है ।

1.6. जेंडर रूढ़ियाँ

रूढ़ीवाद एक ऐसी अवधारणा है जिसके द्वारा हम अपने आस पास के समाज को कुछ पूर्व प्रचलित और समान्यीकृत मान्यताओं के आधार पर समझने का प्रयास करते है । व्यक्ति अपने अनुभवों के आधार पर तो कभी अपने आस पास उपस्थित कुछ महत्वपूर्ण तथ्यों व परिस्थितियों के द्वारा रूढ़ीवाद का निर्माण करता है । रूढ़ीवाद प्रायः परंपरा पर आधारित होता है एवं समाज में आ रहे आधुनिक बदलावों में अवरोध उत्पन्न करता है । यह सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों रूपों में पाया जाता है परन्तु सामान्यतः इसका नकारात्मक रूप ही प्रचलित
है ।

पुरुषों के बारे में पारम्परिक धारणा है कि पुरुष सक्रिय है, फुर्तिला है, और उसकी सोच स्पष्ट है। इन्हें पुरुषों के प्राकृतिक गुणों के रूप में देखा जाता है, जो सकारात्मकता का प्रतीक माने जाते हैं जबकि पारम्परिक सोच के अनुसार महिलाओं को निष्क्रिय, सुस्त, और अस्पष्ट या रहस्यात्मक विचारों वाली माना जाता है। ये गुण प्राकृतिक रूप से नकारात्मकता का प्रतीक माने जाते हैं। यह परम्परागत सोच उनके जैविक अंतर के कारण उपजी है जिसके अनुसार पुरुष सक्रिय प्रदाता है और महिला निष्क्रिय धारक है। यह परम्परावादी लोगों की सोच है ।

जेंडर सामाजिक रचना है जो की समाज में महिला एवं पुरुषों के मध्य अंतर स्थापित करने के उपयोग में आते है । इसकी उत्पत्ति महिला एवं पुरुषों की भूमिका निर्धारण, व्यवहार, क्रियाकलापों आदि के कारण हुई है । जिसके परिणाम स्वरुप व्यक्तियों के मन में महिला एवं पुरुषों के विषय में कुछ सोच एवं अभिवृत्ति उत्पन्न होती है जिसे हम जेंडर रुढ़िवादी कहते हैं।

Gender stereotype is referred to the “belief and attitudes towards masculine and feminine traits.” It may also be called as “Sexual division of Labour.”

जेंडर रुढ़िवाद के उदाहरण

क्र.	**अवयव**	**पुरुष**	**महिला**
1.	परिवार	सार्वजनिक अधिकार क्षेत्र	निजी अधिकार क्षेत्र
		भरण पोषण करने वाला (Bread Winner)	गृह कार्य करने वाली (Home maker)
		कमाई करने वाला	घर एवं बच्चों के देख रेख करने वाली
		साहसिक प्रकृति वाले, अधिकांशतः लड़के बन्दूक एवं कार से खेलते हैं।	ध्यान रखने /परवाह करने वाली, गुड़ियों से खेलने वाली।
2.	राजनैतिक एवं आर्थिक क्षेत्र	आकस्मिक स्थिति में निर्णय लेने के लिए सक्षम	भावुक
3.	मनोवैज्ञानिक क्षेत्र	दृढ, मजबूत, कठोर, तार्किक, तर्कसंगत।	नाजुक, सरल, डरपोक, विनम्र, निष्क्रिय।
4.	सांस्कृतिक क्षेत्र	छोटे बाल, समान जेंडर के साथ दोस्ती, आदर्श पोशाक का स्वरुप (पैंट-शर्ट)।	लम्बे बाल, आदर्श पोशाक का स्वरुप साड़ी, सलवार सूट।
5.	धार्मिक क्षेत्र	कम धार्मिक एवं आध्यात्मिक।	अधिक धार्मिक एवं आध्यात्मिक।
6.	सम्बन्ध क्षेत्र	अवैयक्तिक, खुले विचारों वाला, लक्ष्य उन्मुखी, अपने बारे में सोचने वाला(self-oriented)।	वैयक्तिक, समझना(understanding), ध्यान रखने वाली, पालन - पोषण करने वाली।

जेंडर रुढ़िवाद को प्रभावित करने वाले करक

1. जैविक भिन्नताएं
2. सामाजिक अन्तःक्रिया
3. संस्कृति
4. धर्म

5. भाषा
6. समाजीकरण प्रक्रिया
7. परिवार
8. शिक्षा
9. समुदाय
10. परंपरागत प्रथाएं

जेंडर रुढ़िवाद को मिटाने के लिए कुछ सुझाव

1. **बच्चों के पालन पोषण के तरीके** – यह इस प्रकार होने चाहिए की इसमें लड़के एवं लड़कियों के मध्य किसी भी प्रकार का विभेद न हो | जैसे-खिलौने खेलना, घर के कार्य दोनों को समान रूप से करना चाहिए |
2. **समाजीकरण की प्रक्रिया** – अधिगम, प्रशिक्षण एवं उम्मीदें दोनों से बराबर होने चाहिए | जैसे घर के कार्य सिर्फ़ लड़कियों से ही न कराकर लड़कों से भी कराने चाहिए | लड़कियों को भी स्वत्रंत रहने का अवसर देना चाहिए | उन्हें भी घर से बाहर के कार्य करने देना चाहिए |
3. **तार्किक एवं सही सोच का निर्माण करना चाहिए** – दोनों में भेद-भाव न करके सही एवं गलत का यथार्थ निर्णय करना चाहिए |
4. **शिक्षा** – दोनों को सामान शिक्षा देना चाहिए | स्कूल में विभिन्न प्रकार की गतिविधियों के द्वारा समान अवसर प्रदान करना चाहिए | दोनों को समान रूप से प्रेरित करना चाहिए | लड़कियों को समूह का नेता बनने का मौका देना चाहिए|
5. **धर्म**- दोनों में समान धार्मिक मूल्यों का विकास करना चाहिए |
6. **निम्न क्षेत्रों में समान अवसर प्रदान किया जाना चाहिए-**
   - विषय के चयन
   - उच्च शिक्षा के लिया अवसर देना।
   - खेल-कूद के क्षेत्र में अवसर देना
   - आर्थिक क्षेत्र में सहभागिता
   - राजनीतिक क्षेत्र में सहभागिता
   - सांस्कृतिक क्षेत्र में सहभागिता- जैसे समूह नृत्य लड़के एवं लड़कियों, दोनों के लिए, कृषि के कार्य |
   - एन.सी.सी.,एन.एस.एस एवं स्काउट एंड गाइड दोनों के लिए होना चाहिए |

- लड़कियों को शैक्षिक भ्रमण एवं यात्रा के अवसर देने चाहिए ।

7. **महिला सशक्तिकरण-** रोजगार तथा प्रशिक्षण के लिए सहायता देने का कार्यक्रम । महिला शिक्षा के लिए संघनित कार्यक्रम आदि ।
8. बैनर्स एवं पोस्टरों के द्वारा जागरूकता
9. अभिभावकों को लड़कियों के महत्व एवं अधिकारों के बारे में अवगत करना
10. लड़कियों के लिए चलायी जा रही विभिन्न सरकारी योजनाओं के बारे में जागरूक करना- लाडली लक्ष्मी योजना, सर्व शिक्षा अभियान,गाँव की बेटी योजना, बेटी पढ़ाओं, बेटी बचाओं आदि ।
11. लड़कियों के विषय में सकारात्मक अभिवृत्ति का निर्माण करना।
12. लड़कियों में स्व अवधारणा एवं स्व महत्व का विकास करना।
13. उनके समक्ष सफल बेटियों का उदाहरण रखना – जैसे कल्पना चावला, किरण बेदी, सायना नेहवाल के उदाहरण प्रस्तुत करना ।
14. शिक्षण शास्त्रीय विधियों को बदलना, पाठ्यचर्या विधि, मूल्यांकन विधि को बदलकर लड़कियों की सहभागिता को बढाया जा सकता है ।
15. जेंडर रूढ़ीवाद के प्रति जागरूकता अभियान चलाया जा सकता है ।

अपनी प्रगति की जाँच करें 4

2. जेंडर रूढ़ीवाद से आप क्या समझते है ? उदाहरण देकर स्पष्ट करें ।

   ....

   ....

3. जेंडर रूढ़ीवाद को दूर करने के उपाय सुझाएँ ।

   ....

   ....

1.7. जेंडर के मनोसामाजिक परिप्रेक्ष्य

‘वाद’ शब्द जिस विषय के साथ जुड़ता है, अपने साथ एक विचार, चिन्तन, क्रांति, संघर्ष और आन्दोलन के बीज लेकर चलता है। जैसे-जैसे यह ‘वाद’ का बीज पनपता है, बढ़ता है, वैसे-वैसे वाद के सम्बन्ध मे विभिन्न प्रकार के विचार व अनेक दृष्टिकोण सामने आने लगते हैं। फिर सहमति-असहमति का दौर चलता है। विभिन्न व्यक्तियों के विचारों मे टकराहट होती है। इस विचार द्वंद्व से ‘वाद’ का एक रचनात्मक और सकारात्मक पक्ष सामने आता है, जिसमें समाज के अधिकांश लोगों का हित समाहित

होता है। निश्चय ही नारीवाद, स्त्री के हित में किया जा रहा, एक ऐसा आन्दोलन है, जो विभिन्न कारणों को लेकर, विश्व भर में फैल चुका है। नारी का शोषण, उत्पीड़न और अत्याचार सभी देशों मे कमोबेश रूप मे उपस्थित है। नारीवाद को स्पष्ट करते हुए वृंदा करात लिखती हैः ''नारीवाद और महिला मुक्ति आन्दोलन दो अलग-अलग वस्तुएं हैं। नारीवाद एक विचारधारा है, जिसके आधार पर महिलाओं की मुक्ति के प्रयास किए जाते हैं। इसके अनेक रूप हैं, अलग-अलग प्रवृत्तियां है, जिन्हें समय-समय पर अलग-अलग रूपों मे परिभाषित किया जाता है। मसलन एक नारीवाद वह है, जिसका मानना है हर पुरूष और हर स्त्री के मध्य एक विरोध है, जो सामाजिक अन्तर्विरोध में सर्वप्रमुख अन्तर्विरोध है। कुछ लोगों की समझ में यही बुनियादी नारीवाद हैं। दूसरा नारीवाद है - समाजवादी नारीवाद, जो समाजवादी व्यवस्था में तो विश्वास रखता है, लेकिन जिसका मानना है कि समाजवाद की विचारधारा मे वर्ग को अधिक महत्व दिया जाता है, जबकि स्त्री होने के कारण उस पर होने वाले शोषण को अधिक उजागर करने की जरूरत है। तीसरा नारीवाद 'इंसेशियलिस्ट' (तात्विक) है, जिसकी मान्यता है कि जननी होने के कारण स्त्री की प्रकृति पुरूष से भिन्न है, जैसे पुरूष का हिंसक तथा स्त्री का शांतिप्रिय होना और पुरूष की तुलना में स्त्री का प्रकृति से अधिक गहरा और मानवीय सरोकार रखना है।"

नारीवादी अवधारणा कई प्रश्नों से गुथी हुई है। विभिन्न विचारकों ने पृथक्-पृथक कोण से नारीवादी विचारधारा को तराशने का प्रयास किया है, पर इस तराशने की प्रक्रिया मे बहुत सी चीजें समानान्तर चलती हैं। किसी एक चीज या तथ्य को लेकर नारीवादी विचारधारा को एक फ्रेम में नही जड़ा जा सकता है। नारीवादी विचारधारा में भी स्त्री ही केन्द्र में है और उसके चारों ओर जो घेरा बन गया है जिसके आधार पर उसे पुरूष की तुलना मे कहीं छोटा ठहराया गया है। यह शिद्दत के साथ उछाला जाता है कि प्रकृति ने ही जेन्डर के आधार पर स्त्री और पुरूष को अलग-अलग बनाया है। दोनों की शारीरिक विशेषताएं एक-दूसरे से भिन्न हैं। पुरूष बाह्य संसार में शक्तिशाली है। अपनी शक्ति से विजय पताका फहराता आया है। नारी तो गृह शोभा है। घर के कार्य में निपुण है, श्रेष्ठ है। इस दृष्टि से दोनों असमान हैं, क्योंकि दोनों की क्षमताएं, शक्ति और बौद्धिक योग्यता में भी अंतर है। इस जेन्डर विभेद को लेकर अनेक विचार प्रकट किए जाते रहे हैं। अनामिका नारीवाद की तीन मूल प्रवृत्तियां की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहती हैं ''... फेमेनिज्म की तीन मूल प्रवृत्तियां हैः। 1. जेण्डर एक सामाजिक कन्स्ट्रक्ट है 2. पितृसत्तात्मक व्यवस्था मे आचार संहिताएं चूंकि पुरूषों की बनाई हुई होती हैं, इसलिए स्त्रियों की तुलना में पुरूषों के प्रति इनका रवैया पक्षपातपूर्ण होता है- स्त्रियों को विकास के समान अवसार भी 'कृपापूर्वक' ही दिए जाते हैं एवं 3. भविष्य का जो लिंग शोषण मुक्त समाज होगा, उसे गढ़ने में स्त्रियों के कार्यक्षेत्र, प्रेम, प्रजननादि का अनुभव मूलक वृत्तांत और उनकी भाषा तथा शिल्प के'स्वतंत्र' व्यक्तित्व का विकास बहुत निर्णायक सिद्ध होंगे। इस प्रकार फेमिनिज्म के दो दायित्व हो जाते हैं - पहला, जेन्डर स्टीरियोटाइप पर प्रहार तथा दूसरा, स्त्री मन और शरीर की सही समझ का विकास''।

'वाद' शब्द अपने साथ विषय से सम्बन्धित सहमत और असहमत की विचारधारा को लेकर चलता है। देश व विदेश में विद्वानों के अपने खेमे हैं। वे प्रत्येक विषय को एक विशेष सिद्धान्त व विचारधारा के तहत देखते, परखते, विश्लेषण करते हैं। पर प्रत्येक सिद्धान्त अपने विचारों की भूमि पर नए बीज भी बोता है, जो आगे चलकर एक सम्प्रदाय अथवा स्कूल का रूप ले लेते है। इस दृष्टि से हम कुछ निम्नलिखित सिद्धान्तों को देखने का प्रयास करेंगे-

1.7.1. धुर नारीवादी (रैडिकल)

रेडिकल नारीवादी विचारधारा

कोई भी विषय सदैव उसी रूप में नही रहता। उसकी अन्तर्वस्तु मे निरन्तर बहुत सी चीजें घटती-बढ़ती रहती हैं। विषय को लेकर कई विचारधाराएं जन्म लेती रही हैं। एक ही समय में एक ही विषय पर विद्वानों के विचारों मे मतभेद होते हैं। इस तरह एक ही विषय पर विचारधारएं भी भिन्न-भिन्न प्रकार की हो जाती हैं। नारीवादी विचारधारा के साथ भी ऐसा ही हुआ है। यही चिन्तन और विचारधारा की प्रवृत्ति होती है। रेडिकल नारीवादी विचारधारा स्त्री देह को लेकर जो विभिन्न प्रकार से शोषण का शिकार बनती है, उसका विरोध करती है, जैसे बलात्कार,, वेश्यावृत्ति आदि। सीमा दास रेडिकल नारीवाद का अर्थ स्पष्ट करते हुए लिखती हैं ''दरसल 'रेडिकल नारीवाद' मे निहित 'रेडिकल' शब्द का यह अर्थ 'अतिवादी' या 'हठधर्मी' कतई नहीं है। इसकी उत्पत्ति 'जड़' के लिए लेटिन शब्द से हुई है। रेडकल नारीवादी सिद्धान्त में पुरूष द्वारा महिलाओं के उत्पीड़न को समाज में व्याप्त सब प्रकार के सत्ता-सम्बन्धों की गैरबराबरी की जड़ में देखा जाता है। रेडिकल नारीवादियों के हिसाब से महिलाओं की यौनकता और प्रजनन की क्षमता दोनों महिलाओं की शक्ति और उनके उत्पीड़न के जड़ मे होते हैं।'' इस सिद्धान्त के पक्षधर और पैरवीकार लिंग के किसी भी प्रकार के दोहन और उत्पीड़न के विरूद्ध खड़े होते हैं। दूसरी ओर इस सिद्धान्त में भी स्त्री को अनेक कार्यो के लिए उपयुक्त नहीं समझा जाता है। इसलिए एक लम्बे समय तक स्त्री को सत्ता में भागीदारी से वंचित रखा गया। जैविक धारणाओं का जो स्त्री-पुरूष को दो श्रेणियों मे विभाजित करता है, रेडिकल नारीवादी विरोध करते हैं। यही कारण है कि अमेरिका और ब्रिटेन मे लिंगभेद के विरूद्ध आवाज बुलन्द की गई। ऐसे संगठनों की स्थापना की जाने लगी, जो पुरूषवादी सत्ता का विरोध करते थे। रेडिकल विचारधारा के अनुयायी किसी ठोस सिद्धान्त को लेकर नहीं चल रहें थे, पर ये नारीवादी जमीनी आन्दोलनों से जुड़े थे।

यदि रेडिकल नारीवादी विचारधारा का विश्लेषण किया जाए तो निम्नलिखित कुछ बिन्दु सामने आते हैं-

1. नारीवादी विचारधारा के पक्षधर यौन-उत्पीड़न का विरोध करते हैं।
2. नारी देह सौन्दर्य ही मात्र नही है।
3. यह विचारधारा पुरूष से नहीं बल्कि पितृसत्तात्मक वर्चस्व के प्रति विरोध दर्ज करती है।

4. विभिन्न संस्थाओं के सरंचनात्मक ढांचे मे बदलाव किया जाना चाहिए, जैसे आर्थिक-सामाजिक,राजनीतिक एवं वैधानिक। इनमें इस रूप में परिवर्तन किया जाए, जिससे स्त्री को समान रूप से अधिकार प्राप्त हो सकें।
5. लिंग भेद के आधार पर स्त्री और पुरूष के मध्य किसी प्रकार की लक्ष्मण रेखा नहीं खींची जाए।
6. जैविक सिद्धान्त का इन्होंने खण्डन किया।
7. मातृशक्ति के रूप में नारी के प्रदर्शन को यह सही नहीं मानती। मातृशक्ति की अवधारणा को धार्मिक जामा पहनाकर उसे बहुत से सामाजिक कार्यो से पृथक् कर आदर्शों का लबादा ओढ़ाया जाता है, जो नारी प्रगति में बाधक है।
8. लिंग भेद की सोच और मानसिकता स्त्री की जीवनशैली और कार्यशैली को पृथक् ढंग से गढ़ते हैं, जिससे उनकी पहचान अलग ढंग से हो जाती है। इस प्रकार के भेद समाप्त हों।
9. नारी जन्म से नारी नहीं होती, बल्कि उसे समाज बनाता है। इसलिए समाज की सोच में बदलाव लाना है।
10. उन्हें मातृत्व प्राप्त करने हेतु विवश न किया जाए।
11. नारी मात्र यौन सन्तुष्टि का न तो साधन है और न वस्तु।
12. वे अपने व्यक्तित्व का निमार्ण स्वतः करने के पक्ष में हैं, जिसमें पुरूषों का किसी तरह का हस्तक्षेप न हो।
13. नारीवादी विचारधारा के समर्थक उस पुरूष प्रधान संस्कृति का विरोध करते हैं, जिसे उन्होंने उपने स्वार्थों को ध्यान मे रखकर गढ़ा है।

वास्तव मे सन् 1949 मे सिमोन द बोउआर की 'सेकन्ड सेक्स' प्रकाशित होने पर नारी जगत को संघर्ष करने की एक नई रोशनी दिखाई पड़ी। आरम्भ में वे नारीवादी नही थी लेकिन कालान्तर में वे नारीवादी बन गई। सिमोन उन बातों पर जोर देती हैं जो नारी को नारी बनाए रखने के लिए जिम्मेदार है, जैसे गैर-महत्वपूर्ण कार्य स्त्रियों से कराए जाते हैं। इस तरह व्यावसायिक और सरकारी कामों में भी स्त्री पुरूष के समकक्ष नहीं हैं। इसीलिए वे इन सभी चीजों की आलोचना करती हैं और विरोध दर्ज करती हैं कि स्त्री-पुरूषों के मध्य दोहरे मापदण्ड क्यों हैं? वे इस बात पर जोर देती हैं कि स्त्री की मुक्ति का मार्ग स्वयं स्त्री बनाएगी और इसके लिए उसे स्वयं संघर्ष करना होगा। उनकी प्रसिद्ध पंक्ति है '' स्त्री पैदा नहीं होती, बनाई जाती है।'' वास्तव मे नारीवादी विचारधारा ने उन समस्त चीजों का पर्दाफाश किया, जिनके द्वारा पुरूष स्त्री पर अनादिकाल से एकाधिकार जमाए हुए थे। उनके देह सौन्दर्य पर नियंत्रण बनाए हुए है। नारीवादी विचारधारा के समर्थक जैविक निर्णयवाद के पक्षधर हैं । इस आधार पर इनके सिद्धान्त की कटु आलोचना की जाती है। इस तरह एलेन म्योर और इलने शोवाल्टर ने स्त्रियों की साहित्यिक अभिव्यक्तियों

एवं उपसंस्कृतियों को एक प्रगतिशील परम्परा के रूप स्थापित किया। उपसंस्कृति के प्रगतिशील प्रस्तुतीकरण ने नारी समाज की एक ऊर्जायुक्त चेतना को प्रोत्साहित किया, जिससे वे अपने अस्तित्व एवं अस्मिता का संघर्ष कर सकें। इस तरह नारीवादी विचारधारा ने एक ठोस स्वरूप धारण किया।

अपनी प्रगति की जाँच करें 5

14. रेडिकल नारीवादी विचारधारा से आप क्या समझते हैं ? इसके मुख्य बिन्दुओं पर प्रकाश डालिए ।

....

....

1.7.2. समाजवादी नारीवादी मार्क्सवादी नारीवाद

वास्तविक रूप में समाजवादी चिन्तन का आरम्भ कार्ल मार्क्स के द्वारा हुआ। मार्क्स वह प्रथम दार्शनिक हैं, जो आर्थिक-सामाजिक घटनाओं को भाववादी आधार पर नहीं देखते हैं। उन्होंने सामाजिक घटनाओं का अध्ययन वैज्ञानिक दृष्टि से किया। उनका सम्पूर्ण सिद्धान्त ऐतिहासिक भौतिकवाद और द्वंद्वात्मक भौतिकवाद पर आधारित है। मारिस कानफोर्थ समाजवाद के लिए लिखते हैं '' समाजवाद सम्पूर्ण समाज की भौतिक तथा सांस्कृतिक आवश्यकताओं को सन्तुष्ट करने के लिए उत्पादन के साधनों के सामाजिक स्वामित्व और उनके उपयोग की व्यवस्था है, क्योंकि समाज के आर्थिक आधार के ऐसे बुनियादी रूपान्तरण से ही पूंजीवाद से उत्पन्न दोषों को समाप्त किया जा सकता है और नई शक्तिशाली तकनीक का भरपूर उपयोग किया जा सकता है।'' समाज की बुनावट और विभिन्न प्रकार के सामाजिक संबंधों का टूटना-बनाना उत्पादन के साधनों पर निर्भर करता है। उत्पादन के साधनों पर जैसे-जैसे व्यक्ति का एकाधिकार होता जाता है और इसी बिन्दु से श्रमिक वर्ग का शोषण आरम्भ हो जाता है। इस शोषण में स्त्री और पुरूष दोनों सम्मिलित हैं। वैयक्ति सम्पत्ति में वृद्धि के साथ नारी भी पुरूष की एक सम्पत्ति बन गई। एक वस्तु बन गई। पुरूष पर निर्भर हो गई। वह दास की तरह परिवार में रहने लगी। स्वतंत्रता, अधिकार आदि उसके पास कुछ नहीं रहे थे। कुछ था तो उसके पास परिवार की चाकरी करना । नारी-शोषण की नीव आर्थिक ढांचे पर मनुष्य के एकाधिकार से जन्म लेती है। उद्योगों व औद्योगीकरण की प्रगति के साथ नारी के दोहन व उत्पीड़न में वृद्धि होती जाती है और पूंजीवादी व्यवस्था की स्थापना के साथ नारी शोषण और उत्पीड़न मे तीव्रता से वृद्धि होती जाती है। समाजवादी विचारक इस व्यवस्था के विरोधी हैं। वे वैयक्तिक सम्पत्ति को शोषण का मूल कारण मानते हैं, क्योकि उत्पादन के साधनों पर वर्ग का एकतरफा अधिकार होता है। वास्तव मे मार्क्स का समाजवादी फलसफा औरत की समाज में आर्थिक-सामाजिक स्थिति, शोषण के ढंग और पूंजीपतियों की नीतियो को समझने मे महत्वपूर्ण भूमिका अभिनीत करती है। मार्क्स की अवधारणा को एंजेल्स ने एक और कोण से विचार करने के लिए सुझाव दिया कि महिलाओं की दासता को जीव विज्ञान अथवा जैविक आधार पर जानने के बजाय इसे इतिहास

मे खोजना होगा। इसमे कोई दो मत नहीं है कि किसी भी प्रकार की समस्या के विकास में एक प्रक्रिया निरन्तर कार्य करती रहती है। नारी की विभिन्न समस्याओं को जानने के लिए इतिहास के विकास की प्रक्रिया को, जो विभिन्न घटनाओं से जुड़ी है, जाने बगैर हम किसी वैज्ञानिक निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकते हैं।

समाजवादी विचारधारा के नारीवादी समर्थक एक प्रश्न खड़ा करते हैं कि परिवार में नारी जो घरेलू कार्य करती है उसका कोई पारिश्रमिक उसे नहीं दिया जाता है ''विलायत से निकलने वाली पत्रिका 'न्यूलेफ्ट रिव्यू' के पृष्ठों पर चली बहस के बारे में लिसे वोगेल ने लिखा है कि यह बहस सिर्फ एक मार्क्सवादी पंडिताऊ बहस नहीं थीं, बल्कि महिलाओं द्वारा घरों मे किए जाने वाले काम प्रकाश डालने तथा पूंजीवादी अर्थ व्यवस्था के साथ इस काम का क्या संबंध है इस पर केंद्रित थी। पूरी बहस के बीच से जो बात उभर कर सामने आई, वह यह थी कि महिलाएं जो घर में काम किया करती हैं और जिसकी कोई मजदूरी उन्हें नही मिलती, उस काम का अर्थ व्यवस्था से संबंध है तथा पूंजीवाद के अंतर्गत परिवार एक महत्वपूर्ण आर्थिक और विचारधारात्मक तथा मनोवैज्ञानिक भूमिका अदा करता है। इस प्रकार सैद्धान्तिक तौर पर मार्क्सवादी विचारकों ने भी महिलाओं के घरेलू काम को एक महत्वपूर्ण विचारयोग्य विषय के रूप मे स्वीकार किया।''

नारीवाद के पक्षधार और समर्थकों का कहना है कि पूंजीजीवाद और पितृसत्ता एक दूसरे से गहरे रूप जुड़े हैं। निश्चय ही यह उत्पादन के साधन ही हैं, जिस पर पुरूषों का वर्चस्व है। परिवार पर भी पुरूष का आधिपत्य है | पितृसत्तात्मक ढांचे में नारी चाहे परिवार की हो अथवा किसी कार्यक्षेत्र में कार्य करती हो वह पुरूष के अधीन ही रहती है, क्योकि वह साधनहीन है। वह उत्पादन कार्य में अपना श्रम बेचती है, पर उत्पादन की मालकिन कभी नहीं बन पाती है। इस मालिकाना शोषण के विरोध में नारीवादी है। पूंजीवादी व्यवस्था में नारी श्रम व शोषण को अतिरिक्त मूल्य की अवधारणा से बेहतर रूप मे समझा जा सकता है, क्योंकि पूंजीपति वास्तविक श्रम से जिस वस्तु का निर्माण करता है, उसका बहुत कम पारिश्रमिक श्रमिक को देता है। अधिकांश लाभ पूंजीपति के हिस्से में आता है। हालांकि विकास की आरम्भिक अवस्था में नारी का दोहन उतना नही हुआ, जितना औद्योगिकीकरण के पश्चात्, क्योंकि यह महसूस किया जाने लगा कि औरत का कार्यक्षेत्र बाहर नहीं है, वरन परिवार है। इस तरह नारी परिवार में सिमट कर रह गई और घर के कार्यों में उसे लिप्त कर दिया गया। यह पुरूष प्रधान समाज की नीति थी। उसे गृहलक्ष्मी कहकर धार्मिक और नैतिक जामा भी पहना दिया गया। इसीलिए कार्ल मार्क्स धर्म को अफीम की गोली कहते हैं। धर्म ने इस प्रकार की आचार-संहिता को गढ़ा है। जिसमें स्त्री कभी परिवार के बंधनों से मुक्त न हो सके। समाजवाद अंधविश्वासों में लिप्त धर्म का खण्डन करता है, जो नारी को दास बनाए रखने में सहायक हों। समाजवाद नारी स्वतंत्रता और समानता के सिद्धान्त पर विश्वास करता है। वह स्त्री और पुरूष के श्रम में भेद नहीं करता और न लिंग भेद के आधार पर नारी का शोषण करता है। समाजवादी विचारधारा के विद्वानों का यह मत है कि वर्ग भेद लिंग भेद को जन्म देता है। इसीलिए समाजवादी

वर्गविहीन समाज की स्थापना में विश्वास करते हैं, पर यह वास्तविक जगत में सम्भव नहीं है। इतना अवश्य है कि यदि वर्ग भेद कम होंगे, तो शोषण भी कम होते जाएंगे और यह तभी होगा जब पूंजीवादी व्यवस्था समाप्त होगी और इससे उत्पन्न पितृसत्तात्मक सत्ता का अंत होगा।

इस तरह जो वर्ग शोषण का आधार है, उसके विरोध मे मार्क्सवाद खड़ा होता है। मारिस कानफोर्थ इस संबंध मे लिखते हैं "इस तरह मार्क्सवाद हमें सभी घोषणाओं और सिद्धान्तों, सभी संस्थाओं और नीतियों के पीछे चालक शक्ति के रूप मे वर्ग, भौतिक और आर्थिक हितों को खोजना सिखाता है। यह हमें उन मतों और संस्थाओं का, जो मजदूर वर्ग के विरूद्ध पूंजीपति वर्ग की सेवा करते हैं, सम्मान करने की नहीं बल्कि विरोध करने की, नए विचारों और रूपान्तरित संस्थाओं को जो पूंजीपतियों की शक्ति तोड़ने तथा उनके प्रतिरोध पर विजय प्राप्त करने और समाजवादी समाज स्थापित करने के लिए मजदूर वर्ग के नेतृत्व में तमाम मेहनतकश जन-गण के व्यापक गठबंधन को संगठित और प्रेरित करने में सहायक होंगे, संघर्ष करने की शिक्षा देता है।" इसमें कोई दो मत नहीं है कि नारीवादी चेतना के विकास में मार्क्सवादी विचारधारा अपनी सहमती नहीं रखती है, क्योंकि यह हर प्रकार के शोषण के विरूद्ध खड़ा होता है चाहे वह नारी शोषण हो अथवा पुरूष। सरला माहेश्वरी भी वर्ग और लिंग पर आधारित असमानताओं के संबंध मे लिखती हैं - " जो समाज जाति, वर्ग और लिंग के आधार पर टिकी हुई असमानताओं से भरा हुआ है, उसमें औरत के प्रति समानता और न्याय पर टिका हुआ व्यवहार हासिल करना एक लम्बे संघर्ष की अपेक्षा रखता है। खासतौर पर इधर के वर्षों में औरतों पर संगठित हिंसा भी हो रही है। साम्प्रदायिक और जातीय दंगों में तो हम उपभोक्ता संस्कृति द्वारा औरतों के विरूद्ध की जा रही संगठित हिंसा का ताजा और भयावह उदाहरण है।" मार्क्स ने स्वयं नारी को केन्द्र में रखकर चिन्तन नहीं किया है, क्योंकि वह समग्र समाज को शोषण मुक्त करने के पक्षधर थें। इतना अवश्य है कि जब देश की आर्थिक शक्तियां पूंजीवादी व्यवस्था से मुक्त होंगी, नारी की आर्थिक-समाजिक स्थिति में सकारात्मक बदलाव आएगा। उनका आर्थिक निर्णयवाद का सिद्धान्त और अतिरिक्त मूल्य का सिद्धान्त ऐतिहासिक भौतिकवाद के वैज्ञानिक विश्लेषण का प्रतिफल है।

अपनी प्रगति की जाँच करें 6

15. समाजवादी नारीवाद की अवधारणा को स्पष्ट कीजिये।

....

....

16. रेडिकल नारीवाद एवं समाजवादी नारीवाद में अंतर स्पष्ट कीजिये।

....

....

1.8. सारांश

'लिंग' एक जैविक शब्द है , जो स्त्री और पुरुष में जैविक भेद को दर्शाता है। वही 'जेंडर' शब्द स्त्री और पुरुष के बीच सामाजिक भेदभाव को दर्शाता है। जेंडर शब्द से हमें इस बात का इशारा मिलता है कि जैविक भेद के अतिरिक्त, जितने भी भेद दिखते हैं, वे प्राकृतिक न होकर समाज द्वारा बनाये गये हैं और इसमें यह बात भी सम्मिलित है कि अगर यह भेद बनाया हुआ है तो दूर भी किया जा सकता है। समाज में स्त्रियों के साथ होने वाले भेदभाव के पीछे समाजीकरण की प्रक्रिया है, जिसके तहत बचपन से ही बालक- बालिकाओं का अलग-अलग ढ़ंग से पालन-पोषण किया जाता है। इस फर्क को हम अपने आस-पास भी देख सकते हैं।लड़कियों को घरेलू काम-काज सिखाये जाते हैं जबकि लड़कों को बाहर के। लड़कियों को दयालु, कोमल, सेवाभाव रखने वाली, सहृदय और घरेलू तथा संस्कारी बनाया जाता है जबकि लड़कों/पुरुषों को मजबूत, ताकतवर सख्त और वीर बनाया जाता है। जेंडर की यह घिसी-पिटी सोच पितृसत्ता को स्थापित करती है जो पुरुषों को ऊपर और महिलाओं को नीचे रखती है।

पितृसत्ता हर मानव समाज में व्याप्त है। यह असमानता पर आधारित एक ऐसी व्यवस्था है । यह लिंग सम्बन्धी श्रम विभाजन और लैंगिकता को फैलाता है। यह पुरुष लैंगिकता को विशेषाधिकार और प्रतिरक्षित करता है। यह एक ऐसी दुनिया है जिसमें पुरुष हर चीज का मापदण्ड बन जाता है, महिलाओं का कोई महत्व नहीं होता । जिस पर इस सामाजिक व्यवस्था को बनाये रखने के लिए एक ही चीज को बार-बार दोहराया गया है। ये समाज परिवार, धर्म, संचार माध्यम, लॉ एक्ट, विधि, नियम, विनियम आदि सभी पितृसत्तात्मक सोच को बढ़ावा देते हैं और ये पुरुष केंद्रक लोकाचार को वैध और अविरल बनाये रखते हैं। इसके परिणामस्वरूप प्रभावशाली सामाजिक व्यवस्था में सिनेमा, साहित्य, पैंटिग, फैशन, दर्शन और धर्म आदि में लैंगिक रुढ़िवादी विचारों को बढ़ावा दिया जाता है और उसे पुनर्स्थापित किया जाता है।

अतः हम यह कह सकते हैं कि महिलाओं और पुरुषों में समानता होनी चाहिए और समानता सिर्फ नाममात्र की ही नहीं बल्कि वास्तविक रूप से होनी चाहिए।

1.9. अपनी प्रगति के जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

1. 1.2. जेंडर
2. 1.2. जेंडर
3. 1.3. लिंग
4. 1.4. पितृसत्ता
5. 1.7. जेंडर रूढ़ियाँ
6. 1.7. जेंडर रूढ़ियाँ
7. 1.8.1. धुर नारीवादी (रेडिकल)

8. 1.8.2. समाजवादी नारीवादी (मार्क्सवादी नारीवाद)
9. 1.8.1. धुर (रेडिकल) मार्क्सवादी एवं नारीवादी
10.1.8.2. समाजवादी नारीवादी (मार्क्सवादी नारीवाद)

1.10. सन्दर्भ ग्रन्थ

- भसीन, कमला, (2000), अंडरस्टैंडिंग जेंडर, कली फोर वूमैन, नई दिल्ली ।
- फेरैली, कोलिन, (2004), इंट्रोडक्शन टू कंटैम्पररी पॉलिटिकल थियरी, नई दिल्ली, सेज पब्लिकेशनस, लंदन, थाउजैंड ऑक्स ।
- सिंह,वी.एन,सिंह जनमे जय (2013), नारीवाद, जयपुर, रावत प्रकाशन ।
- टॉग़, रोजमैरी, (1989), फैमिनिस्ट थॉट ए कॉम्प्रिहैंसिव इंट्रोडक्शन, रॉटलैज, लंदन ।
- मैकिनन, कैटरियोना,(2008),इश्यूज इन पॉलिटिकल थियरी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी थियरी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस।
- हेवुड, एंड्रयू, (1992), पॉलिटिकल आइडियोलॉजिज, पालग्रेव, मैकमिलन ।
- मेनन, निवेदिता,(2012),सीइंग लाइक ए फैमिनिस्ट, नई दिल्ली, पैंग्विन बुक्स, जुबान ।
- शिवा, वंदना,(1988),स्टेइंग अलाइव : वूमैन इकोलॉजी एण्ड सरवाइवल इन इंडिया (इंट्रोडक्शन) वूमैन अनलिमिटेड, नई दिल्ली।
- Rao, Anupama (ed.). 2003. Gender and Caste. New Delhi: Kali for Women.
- Bhasin, Kamla. 2004. Exploring Masculinity. N.Delhi, Women Unlimited
- प्रभा दीक्षित, जॉन स्टुअर्ट-मिल और नारीवाद, (http://adharshilapatrika.blogspot.in/2009/10/blog-post_5903.html)
- नारीवाद :एक अवलोकन,मुफ्त ज्ञानकोष, विकिपीडिया, (http://sandeepmalhan88.blogspot.in/2012/06/blog-post_28.html)

इकाई- 2
जेंडर आधारित समाजीकरण की प्रक्रिया

इकाई- 2: जेंडर आधारित समाजीकरण की प्रक्रिया

इकाई की संरचना

2.0 शिक्षण उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 जेंडर आधारित समाजीकरण की प्रक्रिया

2.3 जेंडर आधारित पहचान के विकास में परिवार, समुदाय, विद्यालय और अन्य सामाजिक संगठनों द्वारा समाजीकरण की भूमिका का आलोचनात्मक अध्ययन

2.4 भारतीय सन्दर्भ में हुए नृजातीय अध्ययन

2.5 सारांश

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

2.0 शिक्षण उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप –

1. भारतीय समाज में जेंडर के परिप्रेक्ष्य में समाजीकरण की प्रक्रिया के विषय में समझ विकसित कर सकेंगे
2. प्राथमिक समाजीकरण के दृष्टिकोण से परिवार की जेंडर आधारित पहचान के विकास में भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।
3. विद्यालय के प्रभाव में जेंडर के सामाजिक-सांस्कृतिक संरचनात्मक स्वरुप एवं महत्व को समझ सकेंगे।
4. सामाजिक मानदण्डों तथा सामाजिक नियंत्रण के प्रभाव में समाज में जेंडर आधारित विकास के विषय में समझ विकसित कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

जेंडर का अर्थ स्त्रीत्व एवं पुरुषत्व के रूप में समानान्तर व सामाजिक रूप से असमान विभाजन से है। अतः जेंडर की अवधारणा महिलाओं व पुरुषों के बीच सामाजिक स्तर पर भिन्नता उत्पन्न करने वाले कारकों से सम्बन्धित है। विभिन्न समाजों में लैंगिक सम्बन्ध विभिन्न स्वरूपों में पाए जाते हैं परन्तु महिलाओं व पुरुषों के बीच व्याप्त अंतर के विषय में सभी समाजों में समानता दिखाई देती है। हमारे समाज में जन्म से ही बालिका शिशु को भेदभाव के साथ पाला जाता है। बालिका शिशु का आरम्भ से ही इस प्रकार का समाजीकरण किया जाता है कि वह पुरुष सत्तात्मकता को आरंभ से ही स्वीकार करके चलती है। यह विभेदक प्रक्रिया आगे बढते हुए शिक्षा के क्षेत्र में पहुँचती है। पाठ्यपुस्तकों में लड़कियों को कमजोर व असहाय दिखाया जाता है। कार्य विभाजन की प्रक्रिया में भी पुरूषों व महिलाओं को

पृथक समझा जाता है। इस समस्त प्रक्रिया में महिलाओं व पुरुषों दोनों में ही अपने जैविकीय गुणों के अतिरिक्त विभिन्न सामाजिक-सांस्कृतिक संरचनात्मक रूढ़ियाँ विकसित की जाती हैं। इस इकाई में हम विकास की विभिन्न अवस्थाओं में जेंडर आधारित समाजीकरण की प्रक्रिया तथा इस पर परिवेश के विभिन्न कारकों के प्रभाव के विषय में अध्ययन करेंगे।

2.2 जेंडर आधारित समाजीकरण की प्रक्रिया

समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मनुष्य समाज के विभिन्न व्यवहार, रीति-रिवाज़, गतिविधियाँ इत्यादि सीखता है। जैविक अस्तित्व से सामाजिक अस्तित्व में मनुष्य का रूपांतरण भी समाजीकरण के माध्यम से ही होता है। समाजीकरण के माध्यम से ही वह संस्कृति को आत्मसात् करता है। समाजीकरण की प्रक्रिया मनुष्य का संस्कृति के भौतिक व अभौतिक रूपों से परिचय कराती है। सीखने की यह प्रक्रिया समाज के नियमों के अधीन चलती है। समाजशास्त्र की भाषा में कहें तो समाज में अपनी परिस्थिति या दर्जे के बोध और उसके अनुरूप भूमिका निभाने की विधि को हम समाजीकरण के ज़रिये ही आत्मसात् करते हैं। समाजीकरण व्यक्ति को सामाजिक रूप से क्रियाशील बनाता है। इसी के माध्यम से संस्कृति के अनुरूप आचरण करने का विवेक विकसित होता है। इसके लिए व्यक्ति द्वारा सांस्कृतिक मूल्यों का जो अभ्यंतरीकरण किया जाता है वह समाजीकरण का ही रूप है।

जेंडर का ताल्लुक समाज में स्त्री-पुरुष के बीच गैर-बराबरी के आईने से है। यह अंग्रेजी के 'सेक्स' या हिंदी के 'लिंग' से अलग है। 'सेक्स' का संबंध महिला-पुरुष के बीच शारीरिक बनावट के फ़र्क से है। वहीं, 'जेंडर' का संबंध महिला-पुरुष के बीच सामाजिक तौर पर होने वाले फ़र्क से है। पितृसत्तात्मक समाज की संरचना जेंडर-विभेद पर आधारित होती है। जैसे – बेटे की चाह, कन्या-हत्या, स्त्री-पुरुष में भेदभाव व सामाजिक कामों में स्त्रियों का पुरुषों से नीचे का दर्जा। जेंडर हमें इन सभी सामाजिक-भेदभाव को समझने का नजरिया देता है। सरल शब्दों में कहा जाए तो यह एक सूचना है, जो ज्ञान के रास्ते से होकर गुजरता है और हमें समाज में सोचने समझने का नजरिया देता है। कमला भसीन के अनुसार 'जेंडर सामाजिक-सांस्कृतिक रूप में स्त्री-पुरुष को दी गई परिभाषा है, जिसके माध्यम से समाज उन्हें स्त्री और पुरुष दोनों की सामाजिक भूमिका में विभाजित करता है।

अपनी प्रगति की जाँच 1

1. 'जेंडर' एक सामाजिक व सांस्कृतिक उत्पाद है। स्पष्ट कीजिए।

....

....

2.3 जेंडर आधारित पहचान के विकास में परिवार, समुदाय, विद्यालय और अन्य सामाजिक संगठन कृत/संगठनों द्वारा समाजीकरण की भूमिका का आलोचनात्मक अध्ययन

भारतीय समाज में स्त्री अस्मिता का प्रश्न उठाती हैं जहाँ पहचान की यह समस्या पुरुष के समक्ष नहीं आती क्योंकि उसकी पहचान स्थायी होती है। स्त्री की तो पहचान ही उसकी अपनी नहीं होती है। वह पहले पिता, फिर पति , फिर पुत्र पर अपनी पहचान के लिए निर्भर होती है, यह विचारणीय प्रश्न है। जेंडर के संदर्भ में समझा जाए तो स्त्री को सदा ही समाज ने कमजोर व आश्रित माना व बनाया जिसके लिए पहले पिता फिर पति फिर पुत्र के संरक्षण की व्यवस्था की गई।

हिंदी-प्रसिद्ध लेखिका महादेवी वर्मा लिखती हैं – "स्त्री न घर का अलंकार मात्र बनकर जीवित रहना चाहती है, न देवता की मूर्ति बनकर प्राण प्रतिष्ठा चाहती है। स्त्री और पुरुष, शरीर के केवल एक गुणसूत्र के अलग होने मात्र से हम स्त्री के व्यक्तित्व को पूर्णतः पुरुष से अलग कर देते हैं जबकि ऐसा नहीं है यह शारीरिक संरचना भर है।" जेंडर आधारित पहचान का विकास सतत चलने वाली प्रक्रिया है जो परिवार, समुदाय , विद्यालय एवं विभिन्न सामाजिक संगठनों के प्रभाव में विकसित होती है।

2.3.1 जेंडर आधारित पहचान के विकास में परिवार की भूमिका-

बच्चे के समाजीकरण की प्रथम पाठशाला उसका परिवार होता है। इसे अस्वीकारने का कोई ठोस आधार भी नहीं है। इस समाजीकरण के अनेक प्रारूप हो सकते हैं परन्तु इतना तय है कि बच्चे के समाजीकरण में परिवार की अहम् भूमिका होती है। जेंडर आधारित पहचान के विकास में परिवार का प्रथम प्रभाव होता है प्राथमिक समाजीकरण के स्तर पर बच्चे को लिंग पहचान की चेतना अपने माता – पिता से प्राप्त होती है। माता – पिता को परिवार में वह विभिन्न सामाजिक व सांस्कृतिक भूमिकाओं में देखते हैं। बच्चे परिवार में अपने भाई बहन व अन्य सदस्यों को देख कर वैसा ही व्यवहार करना प्रारंभ कर देते हैं।

जेंडर आधारित भूमिकाओं के समाजीकरण में माता पिता प्रभावी भूमिका निभाते हैं।पुरुषों द्वारा निर्मित संस्कृति यह निर्धारित करती है कि शासन करना पुरुषों का स्वभाव है जबकि शासित होना महिलाओं की प्रकृति है। इस आधार पर महिलाओं को गृहकार्य एवं बच्चों की देखभाल तक सीमित रखा जाता है जबकि पुरुष इससे अलग रहते हैं। बच्चों को जन्म देना, लालन-पालन करना और उसको सामाजिक व्यक्तित्व बनाने तक का कार्य महिला को सौंपा जाता है जिसके तहत महिलाएँ बच्चों के पालन पोषण की प्रक्रिया में प्रकृति के साथ निकटता से जुड़ जाती हैं जबकि पुरुष में इस प्राकृतिक गुण का अभाव होता है। यह स्थिति पुरुष को परिवार से अलग कर देती है और पुरुष ऐसे कार्यों की तरफ उन्मुख हो जाता है जो सांस्कृतिक तर्क के आधार पर पुरुषों के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत आता है, जैसे धर्म,राजनीति, प्रशासन आदि ऐसे में पुरुष संस्कृति से सम्बंधित हो जाता है और पुरुषों को इन सबका स्वामी घोषित कर दिया जाता है। आज समाज में बच्चों का पालन पोषण करते हुए माता पिता अपने बच्चों में बालक तथा

बलिकाओं से पृथक व्यवहार कर रहे हैं। परिवार में लड़के और लड़की के समाजीकरण की प्रक्रिया के तहत अलग-अलग तरीके से पालन-पोषण शामिल होता है। । इसके अंतर्गत माताएँ अपनी बेटी का पालन–पोषण एक अच्छी बेटी, बहन या भविष्य में एक अच्छी पत्नी के गुण होने की दृष्टि से पालती हैं लेकिन इनमें उनकी अपनी बेटी की पहचान और अस्तित्व कहाँ है? हालाँकि माताएँ अपने बच्चों का पालन पोषण प्यार और सामाजिक-सुरक्षा को ध्यान में रखकर करती हैं परंतु वास्तव में वह भी पितृसत्ता को मूक समर्थन दे रही होती हैं। माता- पिता लड़की को कमजोर समझ कर उस पर लड़के से अपेक्षाकृत अधिक ध्यान रखते हैं। वह लड़की को शांत एवं सहनशील होने की शिक्षा देते हैं, वहीं लड़के को स्वतंत्र एवं आक्रामक भूमिका में रहना सिखाया जाता है । इस प्रकार प्राथमिक समाजीकरण के प्रभाव में बच्चे के लिंग के अनुसार लिंग भूमिका का विकास होना स्वाभाविक है।

अपनी प्रगति की जाँच 2

2. आप एक 'पितृसत्तात्मक समाज' से क्या समझते हैं? भारतीय समाज में प्रचलित जेंडर आधारित विभेद के सन्दर्भ में वर्णन कीजिए ।

....

....

2.3.2 जेंडर आधारित पहचान के विकास में समुदाय की भूमिका-

बच्चे के परिवार के बाहर समाजीकरण की प्रक्रिया पर उसके अभिजात समूह के सदस्यों का प्रभाव पड़ता है। बच्चा जब जन्म लेता है तो वह एक सामाजिक स्थिति में जन्म लेता है। वह एक जाति में जन्म लेता है। वह एक धर्म में जन्म लेता है। वह एक खास क्षेत्र और एक खास भाषा-भाषी समुदाय में जन्म लेता है, जिसकी अपनी विशिष्ट स्मृतियां, संस्कृति और इतिहास होता है। पैदा होने के बाद बच्चा इन सारे तत्वों को एक-एक कर, धीरे-धीरे सीखने, समझने और अपनाने लगता है, जो उस समाज में उसकी अपनी जगह को और इस जगह को लेकर उसके व्यवहार, उसकी धारणा और नजरिए को निर्मित-निर्धारित करती हैं साथ ही दूसरों के प्रति उसके नजरिए को भी निर्मित या परिवर्तित करती हैं। इस प्रकार वह उस समाज की एक इकाई के रूप में विकसित होने लगता है, इसे समाजीकरण की प्रक्रिया कहा जाता है।

ब्रिटिश समाजशास्त्री व नारीवादी लेखिका ऐना ओक्ले के अनुसार 'जेंडर' सामाजिक-सांस्कृतिक संरचना है, जो स्त्रीत्व और पुरुषत्व के गुणों को गढ़ने के सामाजिक नियम व कानूनों का निर्धारण करता है। उनका मानना था कि जेंडर समाज-निर्मित है, जिसमें व्यक्ति की पहचान गौण होती है और समाज की भूमिका मुख्य होती है। इसमें केवल स्त्री ही शामिल नहीं है, बल्कि वह भी शामिल है जो मान्य लिंगों से अलग है, जिनमें पुरुष और स्त्री के समलैंगिक संबंध व उसमें आई जटिलताएँ भी शामिल हैं।

समूह में बच्चे प्रायः खेलते हुए भी लिंग भूमिका को समझते हैं। यह समाज ही है जिसने हमें सिखाया कि लड़कियाँ नाज़ुक होती हैं, इसलिए उन्हें गुड़ियों से खेलना चाहिए और लड़के शक्तिशाली होते हैं, इसलिए उन्हें क्रिकेट और कबड्डी जैसे खेल खेलने चाहिएँ। इस तरह हम 'शक्ति' के इस तथाकथित पैमाने को अपनाने लगते हैं। जेंडर व्यवहार मूलतः समाज-निर्मित है।

अपनी प्रगति की जाँच 3

3. हमारे भारतीय समाज में किस प्रकार के लैंगिक भेदभाव प्रचलित हैं ?

....

....

2.3.3जेंडर आधारित पहचान के विकास में विद्यालय की भूमिका-

बच्चा परिवार के बाद जिस लघु समाज से परिचित होता है, वह उसका विद्यालय समाज होता है। बच्चा अपने परिवार से कुछ न कुछ सकारात्मक या नकारात्मक मूल्य लेकर विद्यालय में आता है। यहाँ पर विद्यालयी शिक्षा तंत्र की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। परिवार के बाद बच्चे का समाजीकरण करने में विद्यालय सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह वो जगह होती है, जहां बच्चे अपने परिवार के बाद सबसे ज्यादा वक्त बिताते हैं, अपने दोस्त बनाते हैं, चीज़ों के बारे में देखना सीखते हैं और दुनिया में अपनी जगह को पहचानना और समझना सीखते हैं। व्यक्ति अपने जीवन में बहुत बाद तक, स्कूल के शिक्षकों और साथ में पढ़ने वालों के व्यवहार और नजरिए से काफी प्रभावित रहता है। इसलिए, मूल्यों और चेतना के स्तर पर एक राष्ट्र कैसा बनेगा, इसमें उस राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली की भी बड़ी भूमिका होती है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हम सभी विद्यालयों को एक ऐसे रूप में परिलक्षित कर रहे हैं जहाँ पर बच्चे की विभिन्नताओं (शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, लैंगिक आदि) के होते हुए भी उन्हें सभी के साथ मिलकर ज्ञान सृजन करने के समान अवसर मिल सकें। उनकी वैयक्तिक आवश्यकताओं के अनुरूप उन्हें कक्षा-कक्ष में उचित वातावरण मिल सके ताकि वे आत्म विश्वास, आत्मसम्मान, सकारात्मक सोच, प्रभावी सम्प्रेषण आदि गुणों को स्वयं में विकसित करते हुए सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास की ओर अग्रसर हो सकें।

विद्यालय समाजीकरण का प्रमुख स्थान है। विद्यालय का प्रभाव भी जेंडर आधारित पहचान के विकास में देखा जाता है। आज कोई भी शिक्षक छात्रों द्वारा अपने साथ विद्यालयों में लाई जा रही असंख्य माँगों और अपेक्षाओं की समझ या उनके प्रति संवेदी हुए बिना व्यावसायिक रूप से सफल नहीं हो सकता है। उन्हें, वर्ग, जाति, धर्म, लिंग और निःशक्तता पर ध्यान दिए बिना सभी छात्रों को संलग्न करने और सीखने के सार्थक अवसर प्रदान करने में सक्षम होना चाहिए। शिक्षक लड़के तथा लड़कियों के साथ अलग- अलग व्यवहार करते हैं जिससे उनमें अलग- अलग लिंग भूमिका का विकास होता है।

पाठ्यक्रम पर भी रूढ़ियाँ अपना प्रभाव डालती हैं। उदाहरण के लिए गणित के सवाल में कहा जाता है कि " एक काम को दो पुरुष 2 घंटो में तथा चार स्त्रियाँ 8 घंटों में करती हैं, तो बताइए उस काम को चार पुरुष एवं आठ स्त्रियाँ कितने घंटों में करेंगी ?" स्पष्ट है कि प्रश्न में भी यह माना जा रहा है कि स्त्री कमजोर है तथा पुरुष की कार्य क्षमता ज्यादा है। इस प्रकार पाठ्य पुस्तकों का प्रभाव भी जेंडर आधारित पहचान के विकास में होता है। भले ही विद्यालय में निश्चित लिखित पाठ्यक्रम हो, जिसमें छात्र/छात्राओं को समान बताया और दिखाया गया हो, लेकिन विद्यालय के कुछ अप्रत्यक्ष पाठ्यक्रम होते हैं। विद्यालय में किया जाने वाला व्यवहार, वहां होने वाली गतिविधियां, वहां का परिवेश, यह सभी अप्रत्यक्ष पाठ्यक्रम का हिस्सा होते हैं। इसे बच्चे लगातार देखते हैं और सीखते हैं।

प्रायः शिक्षक इस रूढि से प्रभावित होते हैं कि लड़कियाँ साहित्य, गृहविज्ञान , अंग्रेजी में अधिक दक्ष होती हैं जबकि लड़कों की निपुणता गणित एवं विज्ञान विषयों में अधिक होती है। लड़कियों के बारे में प्रचलित इस गलत धारणा कि 'लड़कियों को गणित नहीं आता है' के कारण क्या लड़कियों को गणित सीखने का अवसर मिलेगा ? आप स्वयं से पूछ सकते हैं कि यदि लड़कियों को उन्नत गणित सीखने का अवसर कभी भी न दिया जाए/जाये तो वे अपनी योग्यताओं को कैसे दर्शा सकती हैं? पाठ्यक्रम के प्रस्तुतीकरण में पुस्तकों की स्थिति देखें तो वहाँभी लैंगिक रुढियों का प्रभाव दिखायी देता है। किताबों में दिए गए चित्रों पर गौर करें तो समाज में श्रम संबंधी लैंगिक बंटवारे को यह किताबें पुष्ट करती हैं मेहनत के ज्यादातर काम स्त्रियों और लड़कियों को करते हुए दिखाया गया है, जबकि लड़के या पुरुष अधिकतर जगहों पर खेलते या ऐसे काम कर रहे हैं, जिन्हें आम तौर पर स्त्रियों को नहीं करने दिया जाता।

अपनी प्रगति की जाँच 4

4. 'जेंडर' का सन्दर्भ एक सामाजिक- सांस्कृतिक संरचना से है विद्यालयी परिवेश में इसे उपयुक्त उदाहरण के माध्यम से स्पष्ट कीजिए।

....

....

2.3.4 जेंडर आधारित पहचान के विकास में सामाजिक संगठनों की भूमिका

यह सत्य है कि स्त्री-पुरुष दोनों ही जैविक संरचना है पर इनकी पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक भूमिका का निर्धारण 'जेंडर' करता है, जिसका विकास विभिन्न सामाजिक संगठनों के सामाजिक मानदण्डों तथा सामाजिक नियंत्रण के प्रभाव में होता है। जेंडर, अस्मिता की पहचान का सबसे मूक घटक है जो हमें स्त्री व पुरुष कीनिर्धारित सीमा को परिभाषित करने और दुनिया को देखने के नजरिए की नाटकीय भूमिका को बताता है। यह केवल लिंगों के बीच के अंतर को नहीं बताता बल्कि सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक स्तर पर सत्ता से इसके संबंध को भी परिभाषित करता है। महिलाओं

के सन्दर्भ में सिमोन द बोउवार ने कहा था कि 'महिला होती नहीं, बल्कि बनाई जाती है'। समाज में महिलाओं के इस निर्माण-कार्य और उनके हिस्से आती 'असमानता' का विश्लेषण किया जाए तो हम इसका एक प्रमुख कारक – '*जेंडर की अवधारणा*' को पाते हैं। जेंडर आधारित पहचान के विकास में विभिन्न सामाजिक संगठनों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अनेक संगठनों ने समाज में महिलाओं के अधिकारों के प्रचार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है यूनिसेफ, यूएनडीपी, तथा यूएनएफपीए सहित कई संयुक्त राष्ट्र संस्थाओं द्वारा व्यक्तिगत मानव अधिकारों की दिशा में काम किया जा रहा है। यूएनडीपी लैंगिक समानता पर केंद्रित है जो महिलाओं के सशक्तिकरण न केवल मानव अधिकार के रूप में, बल्कि सहस्राब्दि विकास लक्ष्यों और सतत विकास को प्राप्त करने के लिए एक प्रमुख कारक मानता है। महिला एवं बाल विकास मंत्रालय, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए राष्ट्रीय मिशन, और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग आदि राष्ट्रीय स्तर पर सशक्तिकरण की दिशा में काम कर रहे हैं। विभिन्न सामाजिक संगठन अपनी कार्यनीतियों से महिलाओं की स्थिति और सशक्तिकरण के परंपरागत निर्धारकों द्वारा पैदा की गई चुनौतियों को सामने लाते हैं तथा स्थिति में सुधार हेतु आवश्यक प्रयास किये जाते हैं उदाहरण के लिए राष्ट्रीय महिला सशक्तिकरण नीति (2001) के अन्तर्गत निम्न लक्ष्य महिलाओं की उन्नति, विकास तथा सशक्तीकरण को मूर्त रूप देने हेतु निर्धारित किये गए-

1. महिलाओं के पूर्ण विकास हेतु सकारात्मक आर्थिक तथा सामाजिक नातियों के जरिए एक माहौल का निर्माण करना, ताकि वे अपनी क्षमताओं को समझ सकें।
2. राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा नागरिक क्षेत्रों में महिलाओं द्वारा सभी मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रताओं का पुरुषों के समान कानूनी तथा व्यावहारिक उपयोग करना।
3. सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक जीवन में महिलाओं द्वारा भागीदारी और निर्णय क्षमता के समान अवसर।
4. स्वास्थ्य देखभाल, सभी स्तर की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, कैरियर तथा व्यावसायिक मार्गदर्शन, रोजगार, समान वेतन, पेशेवर स्वास्थ्य तथा सुरक्षा, सामाजिक सुरक्षा तथा सरकारी ऑफिस इत्यादि में समान अवसर की उपलब्धता।
5. कानूनी सिस्टम को सुदृढ़ करना, जिसका उद्देश्य महिलाओं के खिलाफ होने वाले सभी प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन हो।
6. पुरुष तथा महिला दोनों के सक्रिय भागीदारी और साझीदारी द्वारा सामाजिक धारणाओं और सामुदायिक व्यवहारों में परिवर्तन लाना।
7. विकास प्रक्रिया में एक लैंगिक दृष्टिकोण को लागू करना।

8. महिलाओं तथा बालिकाओं के खिलाफ होने वाले किसी भी प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन; तथा
9. सिविल सोसाइटी के साथ खास कर महिला संगठनों के साथ साझेदारी का निर्माण तथा उसका सशक्तीकरण।

राष्ट्रीय महिला आयोग, जो महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा सहायता प्राप्त एक सांवानिक निकाय है, को अन्य बातों के साथ-साथ, महिलाओं के संवैधानिक एवं कानूनी हितों के सुरक्षोपायों की समीक्षा करने, उपचारात्मक विधिक उपाय सुझाने, शिकायत निवारण को सहज बनाने और महिलाओं को प्रभावित करने वाले सभी नीतिगत मुद्दों पर सरकार को सलाह देने का अधिकर प्राप्त है।

अपनी प्रगति की जाँच 5

5. राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत विभिन्न सामाजिक संगठनों की जेंडर आधारित समाजीकरण की प्रक्रिया में क्या भूमिका है? स्पष्ट कीजिए।

....

....

2.4 भारतीय सन्दर्भ में हुए नृजातीय अध्ययन

नृजातीय अध्ययन के माध्यम से किसी एक समाज के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन किया जाता है और समाज को सम्पूर्णता में देखा जाता है। नृजातीय अध्ययन के माध्यम से किसी संस्कृति के विभिन्न पहलुओं को उस संस्कृति व समाज में रहने वाले सदस्यों के अनुभवों के आधार पर समझने का प्रयास किया जाता है। शोध की यह प्राविधि नारीवादी शोध के सन्दर्भ में अत्यन्त महत्वपूर्ण समझी जाती है क्योंकि इसके माध्यम से स्त्री अनुभवों को गुणात्मक रूप में समझा जा सकता है। विभिन्न समाजों व उनकी संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन स्त्री विमर्श के सन्दर्भ में कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों को उजागर करता है जैसे –

1. क्या स्त्रियों की स्थिति विभिन्न समाजों में एक जैसी है? या उनमें कोई गुणात्मक अंतर भी है?
2. जनजातीय समाजों में स्त्रियों की स्थिति अन्य समाजों से किस प्रकार भिन्न है?
3. सामाजिक संरचना व नातेदारी व्यवस्था किस प्रकार समाज में स्त्रियों की स्थिति को प्रभावित करती है?
4. क्या पितृसत्ता सभी समाजों में पायी जाती है?
5. क्या कभी समाज में मातृसत्ता स्थापित हुई है?

इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करने हेतु विभिन्न नृजातीय अध्ययन किये गए हैं ।लर्नर (1986) ने अपने अध्ययन में पाया कि विश्व में मातृसत्ता का कोई ठोस प्रमाण प्राप्त नहीं है किन्तु कुछ समुदायों में मातृ-वन्शजता पायी जाती है। इन समुदायों में स्त्रियों की स्थिति पितृ-वन्शजता वाले समुदायों से बेहतर है। केरल का नायर समाज मातृ-वन्शजता के लिए प्रसिद्ध है। किन्तु सार्दमोनी (1999) ने अपने अध्ययन में पाया कि नायर समाज पर भी वर्तमान शिक्षा प्रणाली का असर है तथा वह भी अपनी संस्कृति को हेय दृष्टि से देखने लगे हैं और धीरे-धीरे पितृसत्तात्मक गुण इस मातृ-वन्शज समाज में व्याप्त हो गए हैं। राव व बोदरा (2008) ने अपने अध्ययन में देखा कि आदिवासी समाजों में विधवाओं की सामाजिक स्थिति अन्य हिन्दू समाजों से बेहतर है और विधवाओं से सम्बन्धित किसी प्रकार की रूढ़ियाँ इन आदिवासी समाजों में नहीं हैं। मार्गरेट मीड ने अपनी बहु चर्चित पुस्तक " कमिंग ऑफ़ एज इन समोआ"(1928) में दर्शाया है की सामओया में रहने वाले जनजातीय समूहों में स्त्री- पुरुष सम्बन्ध अमरीका के लोगों से अधिक स्वतंत्र और बेहतर हैं। इसके फलस्वरूप यौवनावस्था में सामओया के लड़के – लड़कियों में कुंठाएं कम देखने को मिलती हैं।

इन विषयों को नारीवाद के सन्दर्भ में देखें तो यह कहा जा सकता है कि स्त्री- पुरुष सम्बन्धों में असमानता जैविक कारणों की अपेक्षा सांस्कृतिक कारणों से होती है। स्त्री और पुरुष के बीच जैविक स्तर पर अंतर स्वाभाविक और सामान्य है परन्तु उस अंतर को रूढ़ियों में बदलने का कार्य सामाजिक व सांस्कृतिक कारणों द्वारा किया जाता है।

अपनी प्रगति की जाँच 6

6. 'जेंडर' अध्ययन में नृजातीय शोध विधि किस प्रकार उपयोगी है? उदाहरणों के माध्यम से स्पष्ट कीजिए।

....

....

2.5 सारांश

स्त्री और पुरुष दोनों ही जैविक संरचना हैं यह सत्य है इन्हें बदला नहीं जा सकता। लेकिन इनकी पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक भूमिका का निर्धारण जब किया जाता है तो इनके अपने स्वतंत्र अस्तित्व पर प्रश्न अंकित हो जाता है, जिसका जवाब जेंडर देता है। यह केवल लिंगों के बीच के अंतर को नहीं बताता, वरन पारिवारिक, सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक स्तर पर सत्ता से इसके संबंध को भी परिभाषित करता है। सामाजिक संदर्भों में जब हम जेंडर की बात करते हैं तो इसका पहला प्रयोग लिंग और लिंग की भूमिका के अंतर को स्पष्ट करने के दौरान सामने आता है ,जहाँ स्त्री और पुरुष का

जैविक आधार पर विभाजन न होकर समाज द्वारा तय मानदंडो पर विभाजन है जिसमें स्त्री की भूमिका शोषित की रही तो पुरुष की शोषक की ।समाजीकरण वह प्रक्रिया है जो जन्म से लेकर मृत्यु तक लगातार चलती रहती है। परिवार, विद्यालय व अन्य सामाजिक संगठन व्यक्ति विकास के प्रत्येक चरण में अपना प्रभाव डालते हैं। स्त्री और पुरुष की जेंडर आधारित सामाजिक पहचान के निर्धारण में परिवार, विद्यालय व अन्य सामाजिक संस्थाओं की प्रमुख भूमिका होती है। भारत एक बहु-नृजातीय, बहु-भाषी और बहु-धार्मिक देश है। महिलाओं के प्रति सम्मान भारतीय सभ्यता की प्राचीन परंपरा रही है और अब इन्हें युवा और विविधतापूर्ण आधुनिक भारत के संविधान तथा विधियों में प्रतिष्ठापित किया गया है। महिलाओं की स्थिति का व्यापक अध्ययन करने, समाज में विकसित जेंडर का सामाजिक सांस्कृतिक स्वरुप समझने और महिलाओं की आवश्यकताओं के समसामयिक मूल्यांकन करने व प्राप्त परिणामों के आधार पर सुधारात्मक नीति बनाने की आवश्यकता है जिससे मानव का विकास लैंगिक पृथकता में नहीं, अपितु एक सम्पूर्ण मानव केरूप में सर्वांगीण रूप से सुनिश्चित हो सके। अगर एक समान समाज की रचना करनी है तो महिला होने की पहचान को सम्मान और सहमति के साथ अपनाया जाना जरूरी है क्योंकि हर व्यक्ति का अपना स्वतंत्र अस्तित्व है, एक पहचान है।जिस प्रकार पुरुष का अलग अस्तित्व है उसी तरह महिला का भी एक अलग व्यक्तिव है जिसको साथ लेकर चलने की जरूरत है।

2.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

- भसीन,कमला, (2000), अंडरस्टैंडिंग जेंडर, कली फोर वूमैन, नई दिल्ली.
- फेरैली, कोलिन, (2004), इंट्रोडक्शन टू कंटैम्परारी पॉलिटिकल थियरी, सेज पब्लिकेशनस, लंदन, थाउजैंड ऑक्स, नई दिल्ली.
- नारीवाद :एक अवलोकन,मुफ्त ज्ञानकोष, विकिपीडिया,
- मैकिनन, कैटरियोना,(2008),इश्यूज इन पॉलिटिकल थियरी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी थियरी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस,
- मेनन, निवेदिता,(2012),सीइंग लाइक ए फैमिनिस्ट, पैंग्विन बुक्स, जुबान, नई दिल्ली,
- शिवा, वंदना,(1988),स्टेइंग अलाइव : वूमैन इकोलॉजी एण्ड सरवाइवल इन इंडिया (इंट्रोडक्शन) वूमैन अनलिमिटेड नई दिल्ली.

इकाई 3
लड़कियों की शिक्षा

इकाई 3. लड़कियों की शिक्षा

इकाई की संरचना

3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 लड़कियों की शिक्षा- असमानता और प्रतिरोध
3.3 भारत में महिला शिक्षा का इतिहास
3.4 भारत में लड़कियों की शिक्षा की वर्तमान स्थिति एवं चुनौतियाँ
3.5 स्त्रीवादी दृष्टिकोण से शिक्षा के अवसरों की असमानता की व्याख्या
3.6 मीडिया और अन्य लोकप्रिय माध्यमों की भूमिका का विश्लेषण
3.7 सारांश
3.8 अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर
3.9 सन्दर्भ पुस्तकें

3.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के उपरान्त आप

1. स्त्रियों की शिक्षा में विद्यमान असमानता एवं प्रतिरोध के कारणों के विषय में अपनी समझ विकसित कर सकेंगे।
2. इन कारणों के निवारण के उपायों को सोचकर सार्वभौमिक साक्षरता के उद्देश्य की पूर्ति के मार्ग प्रशस्त कर सकेंगे।
3. भारत में महिला शिक्षा के ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी से परिचित होंगे।
4. वर्तमान में भारतीय महिलाओं की शिक्षा के स्तर एवं स्थिति की समझ विकसित कर पाएँगे।
5. महिलाओं में शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार में मीडिया की भूमिका को समझेंगे।
6. महिलाओं के लिए शिक्षा के असमान अवसरों के सन्दर्भ में स्त्रीवादी दृष्टिकोण से विमर्श करते हुए अपने विचार अभिव्यक्त कर पाएँगे।

3.1 प्रस्तावना

हाल के बरसों में घर और समाज में संसाधनों और अधिकारों यथा शिक्षा, आर्थिक अधिकारों, स्वास्थ्य सेवा और राजनीतिक भागीदारी में वितरण के सिद्धांत के रूप में स्त्री-पुरुष भेद या जेंडर शैक्षिक विमर्श का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। इसका कारण यह है कि शिक्षा विकास के सूचकों से जुड़ी है।

दूसरा, यह इस दृष्टिकोण से व्युत्पन्न है कि शिक्षा एक ऐसा महत्वपूर्ण संसाधन है जिससे महिलाओं को हमेशा से वंचित रखा गया है।

अब यह सामान्य रूप से स्वीकार किया जाने लगा है कि यदि समाज को सही अर्थों में विकास करना है तो महिलाओं को शिक्षा देना अनिवार्य है। यह उनकी सामाजिक गतिशीलता, समानता और सशक्तीकरण के स्रोत के रूप में व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों स्तरों पर भी आवश्यक है, क्योंकि वे पूरी मानवता के आधे अंग हैं। कहा जाता है कि एक पुरुष शिक्षित होता है तो एक व्यक्ति शिक्षित होता है और यदि एक महिला शिक्षित होती है तो एक परिवार शिक्षित होता है। इसलिए समय की माँग है कि महिलाओं की साक्षरता पर विशेष ध्यान केन्द्रित किया जाए क्योंकि महिलाओं की साक्षरता का देश के सकल विकास पर सीधा प्रभाव पड़ता है।

3.2 लड़कियों की शिक्षा- असमानता और प्रतिरोध

लड़कियों की शिक्षा के मार्ग की सबसे बड़ी बाधा लड़कियों को लड़कों के समान शिक्षा प्राप्त करने के अवसर उपलब्ध नहीं हो पाना है। हमारे यहाँ शिक्षा के सभी स्तरों और लगभग सभी पक्षों पर लड़के तथा लड़कियों की शिक्षा में असमानताएँ पाई जाती हैं। लड़कियों को शिक्षा प्राप्त करने के अवसर लड़कों की अपेक्षा कम मिल पाते हैं। प्रजातांत्रिक स्वरुप की रक्षा के लिए तथा लड़कियों की शिक्षा के प्रसार के लिए यह आवश्यक है कि लड़कियों को भी शिक्षा प्राप्ति के लिए पर्याप्त अवसर मिलें। वास्तव में लड़के तथा लडकियाँ दोनों को शिक्षा के अवसर मिलने चाहिए। अतः यह आवश्यक है कि शैक्षिक अवसरों की समानता स्थापित करने के लिए विशेष प्रयास किये जाएँ।

यद्यपि आज का युग विज्ञान का युग है तथा विज्ञान के अनेक रुढ़िवादी विचारों, अन्धविश्वासों तथा दोषपूर्ण रीति-रिवाज़ों की उपयोगिता को सप्रमाण नकार दिया है, परन्तु फिर भी अनेक भारतीय अब भी इन रूढ़ियों, अन्धविश्वासों तथा परम्पराओं का पोषण एवं समर्थन करते हैं। यही कारण है कि हमारे देश की जनसंख्या के एक बड़े वर्ग में लड़कियों की शिक्षा के प्रति अभी भी सीमित, संकुचित, रुढ़िवादी, एकांकी व संकीर्ण विचार पाए जाते हैं छुआ-छूत, बाल-विवाह, पर्दा प्रथा जैसी रुढ़ियों के कारण अनेक बालिकाओं को शिक्षा से वंचित रह जाना पड़ता है। अनेक रुढ़िवादी व्यक्ति स्त्री के कार्य क्षेत्र को घर तक सीमित रखना उचित मानकर उसकी शिक्षा का विरोध करते हैं। उनके विचारों में लडकियाँ शिक्षा प्राप्त करके समानता व स्वतंत्रता की माँग करती हैं, जो स्त्री चरित्रहीनता का सूचक होती है। ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रकार की समस्या और भी अधिक उग्र प्रतीत होती है। वास्तव में यह एक अत्यंत गंभीर समस्या है जिसके कारण अनेक स्त्रियाँ अनपढ़ रह जाती हैं अथवा कुछ वर्षों के अध्ययन के उपरान्त ही शिक्षा छोड़ देती हैं। प्रायः देखा गया है कि कक्षा एक में प्रवेश लेने वाली प्रत्येक सौ लड़कियों में से केवल पैतींस लडकियाँ ही कक्षा पाँच में पहुँच पाती हैं तथा लगभग बीस ही कक्षा आठ में पहुँच पाती हैं। निर्धनता, अशिक्षित माता-पिता, रूढ़िवादिता, लड़कियों की शिक्षा के प्रति संकुचित एवं नकारात्मक दृष्टिकोण,

नीरस पाठ्यक्रम, अनाकर्षक विद्यालयी वातावरण, परामर्श व निर्देशन का अभाव, दोषपूर्ण परीक्षा प्रणाली, अध्यापिकाओं की कमी आदि, लड़कियों की शिक्षा में अपव्यय व अवरोधन के लिए मुख्य रूप से उत्तरदायी होते हैं। स्त्री शिक्षा के प्रसार के लिए अपव्यय व अवरोधन की समस्या को दूर करना होगा जिसके निराकरण हेतु उपरोक्त कारणों का निराकरण करना होगा।
अतः हम कह सकते हैं कि आज आवश्यकता इस बात की है कि इस प्रकार के रुढ़िवादी व धार्मिक अन्धविश्वासों तथा परम्पराओं के प्रति जनमानस का दृष्टिकोण बदला जाए। इसके अतिरिक्त स्त्रियों को भी अपनी शिक्षा के प्रति उदासीनता तथा विरक्तता की भावना का परित्याग करना होगा। जन आन्दोलन, प्रौढ़ शिक्षा का प्रसार तथा जनसंचार के साधन इस दिशा में महत्वपूर्ण सहायता कर सकते हैं।

3.3 भारत में महिला शिक्षा का इतिहास

महिला शिक्षा की वर्तमान स्थिति तथा उसकी कठिनाईयों से पूर्व यह उचित ही होगा कि महिला शिक्षा का विकास किस तरह से हुआ, इस पर एक नज़र डाल ली जाए। आगे प्राचीन काल, मुस्लिम काल तथा ब्रिटिश काल में महिला शिक्षा के विकास का संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत किया गयाहै।

प्राचीन काल में महिला शिक्षा

वैदिक साहित्य में गार्गी, मैत्रेयी, आत्रेय, शकुंतला आदि अनेक विदुषियों की चर्चा मिलती है जो इस बात का प्रमाण है कि वैदिक काल में महिलाओं को भी पुरुषों के समान शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त था, परन्तु केवल गिनी-चुनी कुछ ही विदुषियों की चर्चा मिलने से इस बात का संकेत भी मिलता है कि संभवतः इस समय महिला शिक्षा अत्यंत सीमित थी तथा केवल समाज के सम्भ्रांत परिवारों की लडकियाँ ही शिक्षा प्राप्ति के अवसरों का सदुपयोग कर पातीं थीं। उस समय स्त्रियों के लिए पृथक शिक्षा संस्थाओं की कोई व्यवस्था नहीं थी, जिसके कारण वे पुरुषों के साथ ही शिक्षा प्राप्त करतीं थीं, अर्थात उस समय सह-शिक्षा व्यवस्था का प्रचलन था। वास्तव में, उस समय स्त्रियों की शिक्षा व्यवस्था का प्रमुख उत्तरदायित्व परिवार पर होता था जहाँ पिता, पति अथवा कुलगुरु ही परिवार की स्त्रियों को शिक्षा प्रदान करते थे। स्पष्ट है कि उस काल में स्त्रियों की शिक्षा के लिए कोई सुसंगठित व्यवस्था नहीं थी। फिर भी उस काल की गार्गी, मैत्रेयी, लोपमुद्रा, सुलभा, अपाला जैसी अनेक नारियों ने स्त्री-शिक्षा व विद्वता का अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया था। उत्तर-वैदिक काल में बाल-विवाह का प्रचलन प्रारंभ होने के कारण स्त्रियों की शिक्षा में कुछ व्यवधान उत्पन्न होने लगे थे। फिर भी इतिहास के पन्नों पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि उस काल में शैव्या, सीता, उर्मिला, विद्योत्तमा, चुडाला जैसी अनेक महिलाओं ने अपनी विद्वत्ता, त्याग व समर्पण का अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया था।
बौद्धकाल के प्रारम्भिक वर्षों में स्त्रियों को मठों में प्रवेश नहीं दिया जाता था परन्तु बाद में महात्मा बुद्ध ने स्त्रियों को संघ के रूप में प्रवेश करने की अनुमति देकर स्त्री-शिक्षा को एक नया आयाम दिया, जिसके

कारण स्त्री-शिक्षा को एक नया जीवन मिला। परन्तु यह शिक्षा भी केवल धनी-मानी व कुलीन घरानों की स्त्रियों तक ही सीमित थी। परिणामत: भारत में बहुत लम्बे समय तक सामान्य स्त्रियों की शिक्षा लगभग उपेक्षित ही रही थी। परन्तु उस समय भी संघमित्रा जैसी विदुषियों ने स्त्रियों का नाम रोशन किया था।

मुस्लिम काल में महिला शिक्षा

मुस्लिम काल में भी सामान्य स्त्रियों की शिक्षा उपेक्षित ही थी। उस काल में बाल विवाह तथा पर्दा प्रथा का प्रचलन होने के कारण छोटी-छोटी बालिकाओं के अतिरिक्त अन्य सभी स्त्रियाँ शिक्षा प्राप्ति के अवसरों से प्रायः वंचित ही रह जाती थीं। इतिहास के अवलोकन से प्रतीत होता है कि उस समय अल्प-आयु की बालिकाओं को कुछ वर्षों की प्राथमिक शिक्षा मिल जाती थी। मुस्लिम बालिकाएँ मस्जिद से जुड़े मकतबों में बालकों के साथ प्राथमिक शिक्षा प्राप्त कर लेतीं थीं। माध्यम वर्ग के हिन्दुओं की लडकियाँ परिवार में पारिवारिक शिक्षा के रूप में अक्षर ज्ञान तथा धार्मिक साहित्य का ज्ञान प्राप्त कर लेतीं थीं। शाही घरानों तथा समाज के धनी वर्गों की बालिकाएँ अपने घरों में शिक्षा प्राप्त करतीं थीं। सम्भ्रांत, कुलीन तथा शाही परिवार प्रायः अपने घरों पर ही मौलवी तथा अन्य विद्वानों को बुलाकर परिवार की स्त्रियों को शिक्षा देने की व्यवस्था कर लेते थे। उस काल की अनेक हिन्दू तथा मुस्लिम विदुषियों की चर्चा इतिहास के पृष्ठों पर दृष्टिगोचर होती है। रज़िया सुल्तान, नूरजहाँ, चाँदबीबी, गुलबदन, ज़ेबूनिशां, रानी रूपमती, रानी दुर्गावती, अहिल्याबाई, माता जीजाबाई, बीबी अमरों आदि विदुषियों के नाम मध्यकालीन भारत के स्त्री-शिक्षा के इतिहास में स्मरणीय हैं। परन्तु इस सबके बावजूद मुस्लिम काल में सामान्य वर्ग की स्त्रियों को शिक्षा प्राप्ति के अवसर दुर्लभ ही रहते थे।

ब्रिटिश काल में महिला शिक्षा

ब्रिटिश शासन के प्रथम चरण में महिला शिक्षा को अनावश्यक समझ कर उस पर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया गया। ऐसा प्रतीत होता है कि ईस्ट इंडिया कंपनी को भारत में अपना प्रशासन चलाने के लिए महिला लिपिकों अथवा प्रशासकों की आवश्यकता नहीं थी। स्त्रियों के अनेक अन्धविश्वासों से घिरे रहने तथा भारतीयों का दृष्टिकोण अत्यंत रूढ़िवादी होने के कारण भी संभवतः ईस्ट इंडिया कंपनी ने महिला शिक्षा में कोई रूचि नहीं ली। कंपनी शासन के दौरान महिला शिक्षा का प्रसार मिशनरियों तथा अन्य सामाजिक संस्थानों के द्वारा किये गए इसाई व्यक्तिगत प्रयासों से प्रारंभ हुआ। भारत पर अंग्रेजी शासन के दौरान कस्तूरबा गाँधी, मीरा बहन, भीखाजी कामा जैसे अनेकानेक विदुषियों ने अपने देशप्रेम, त्याग व योग्यताओं से महिलाओं की उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया। मिशनरियों ने भारत में अनेक बालिका विद्यालयों की स्थापना की, जिनमें सहस्त्रों लडकियाँ शिक्षा ग्रहण करतीं थीं।

1854 में वुड के आदेश पत्र में अधिकारिक तौर पर सबसे पहले स्त्री शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया गया तथा स्त्रियों की शिक्षा के प्रसार के सभी संभव प्रयास किये जाने की सिफारिश की गयी जिसके

परिणामस्वरूप लड़कियों के लिए अनेक स्थानों पर प्राथमिक, माध्यमिक तथा उच्च शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गयी। 1902 तक स्त्री शिक्षा ने एक आन्दोलन का रूप ग्रहण कर लिया था। परिणामतः माता-पिता अपनी लड़कियों को शिक्षा प्रदान करने की आवश्यकता महसूस करने लगे थे तथा शिक्षा विभाग ने लड़कियों के लिए अलग बालिका विद्यालय खोलने प्रारंभ कर दिए थे। आर्य समाज, ब्रह्म समाज जैसी समाज सुधारक संस्थाओं ने महिला शिक्षा पर विशेष बल दिया था जिसके फलस्वरुप महिला शिक्षा का तीव्र गति से विकास हुआ था। 1917 से 1947 तक स्त्री शिक्षा का विकास अत्यंत तीव्र गति से हुआ। इस काल में महिलाओं ने स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेना शुरू कर दिया था। इस समय भारतीय नारी संगठन तथा राष्ट्रीय महिला परिषद् की स्थापना हुई। 1927 में प्रथम अखिल भारतीय नारी सम्मलेन हुआ। इसी दौरान बाल-विवाह पर प्रतिबन्ध लगाने के लिए शारदा एक्ट पारित हुआ। इन सभी समाज सुधारक कार्यों में स्त्री शिक्षा के विकास में महत्वपूर्ण योगदान मिला। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत में लगभग तीस हज़ार महिला शिक्षा संस्थाएँ थीं जिनमें लगभग पचास लाख महिलाएँ शिक्षा ग्रहण कर रहीं थीं।

अपनी प्रगति की जाँच करें 1

1. स्वतंत्रता से पूर्व भारत में महिलाओं की शिक्षा के विकास की समीक्षा कीजिए।

   ....

   ....

2. वर्तमान में स्त्रियों की शिक्षा में विद्यमान असमानताओं एवं इसके कारकों का विश्लेषण कीजिए।

....

....

3.4 भारत में लड़कियों की शिक्षा की वर्तमान स्थिति एवं चुनौतियाँ

1947 में स्वाधीनता प्राप्त करने के उपरान्त महिलाओं की सामाजिक तथा शैक्षिक स्थिति में अनेक क्रांतिकारी परिवर्तन हुए। अज्ञानता, परतंत्रता, रूढ़िवादिता तथा असहायता के बंधनों से मुक्त होकर भारतीय महिलाएँ आज एक सम्मानजनक जीवन जी रहीं हैं। महिलाओं के प्रति पुरुषों के दृष्टिकोण में परिवर्तन आ रहा है। महिलाओं से सम्बंधित सामाजिक मान्यताएँ बदल रहीं हैं। भारतीय संविधान में पुरुषों तथा महिलाओं को पूर्णरूपेण समान दर्जा देते हुए भी शिक्षा के प्रसार पर बल दिया गया है। स्वतंत्रता के उपरान्त महिला शिक्षा के मार्ग में आने वाली बाधाओं को जानने तथा उनका समाधान प्रस्तुत करने हेतु अनेक समितियों व आयोग का गठन किया गया। 1958 में गठित दुर्गाबाई देशमुख समिति तथा 1962 में गठित हंसा मेहता समिति के द्वारा भी महिला शिक्षा के प्रचार-प्रसार से सम्बंधित

अनेक महत्वपूर्ण सुझाव प्रस्तुत किये गए थे। कोठारी आयोग (1964-1966) ने भी महिला शिक्षा के प्रचार व प्रसार के लिए अनेक महत्वपूर्ण सुझाव अपने प्रतिवेदन में दिए हैं। 1986 में घोषित नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति में भी महिला शिक्षा को प्रोत्साहित करने की दिशा में क्रांतिकारी परिवर्तन लाये जाने का संकल्प दोहराया गया है।

दुर्गाबाई देशमुख समिति

महिला शिक्षा की समस्याओं तथा उनका समाधान करने के उपायों पर विचार करने के लिए 1958 में भारत सरकार ने दुर्गाबाई देशमुख की अध्यक्षता में राष्ट्रीय महिला शिक्षा समिति का गठन किया जिसे समिति की अध्यक्षा के नाम पर दुर्गाबाई देशमुख समिति कहकर भी पुकारा जाता है। इस समित्ति का प्रमुख कार्य महिला शिक्षा से सम्बंधित विभिन्न विषयों का अध्ययन करके उनके समाधान हेतु सुझाव देना था। समिति ने जनवरी 1959 में अपना प्रतिउवेदन भारत सरकार के सम्मुख प्रस्तुत किया। समिति के द्वारा किये गए कुछ सुझाव निम्नलिखित थे-

1. भारत सरकार को कुछ समय के लिए महिला शिक्षा को एक विशिष्ट समस्या के रूप में स्वीकार करना चाहिए।
2. भारत सरकार को एक निश्चित अवधि के अंतर्गत निश्चित योजना के अनुरूप महिलसा शिक्षा का विकास करने का भार अपने ऊपर लेना चाहिए।
3. भारत सरकार को समस्त राज्यों के लिए महिला शिक्षा के विस्तार की नीति निर्धारित करनी चाहिए तथा इस नीति के क्रियान्वयन के लिए राज्यों को आवश्यक धनराशि प्रदान करनी चाहिए।
4. ग्रामीण क्षेत्रों में महिला शिक्षा के प्रसार के लिए विशेष प्रयास किये जाने चाहिए।
5. पुरुषों तथा स्त्रियों की शिक्षा में विद्यमान अंतर को यथाशीघ्र समाप्त करने के प्रयास किये जाने चाहिए।
6. महिला शिक्षा की समस्या पर विचार करने के लिए राष्ट्रीय महिला शिक्षा परिषद् नामक पृथक इकाई का गठन करना चाहिए।
7. महिला शिक्षा के प्रसार हेतु राज्यों में लड़कियों तथा महिलाओं की शिक्षा की राज्य परिषदें गठित करनी चाहिएँ।

दुर्गाबाई देशमुख समिति के सुझाव को स्वीकार करते हुए केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय ने 1965 में राष्ट्रीय महिला शिक्षा परिषद् का गठन किया। इस परिषद् का प्रमुख कार्य लड़कियों व महिलाओं की शिक्षा से सम्बंधित समस्याओं के निराकरण हेतु तथा स्त्री शिक्षा के प्रसार एवं उसमें सुधार हेतु नीतियों, कार्यक्रमों व प्राथमिकताओं से सम्बंधित सुझाव देना है। यह परिषद् समय-समय पर स्त्री शिक्षा की प्रगति का मूल्यांकन करके भावी कार्यक्रमों की रूपरेखा भी प्रस्तुत करती है। महिला शिक्षा की समस्याओं पर

विचार करने के लिए परिषद् समय-समय पर सर्वेक्षण, विचार-गोष्ठियों तथा अनुसंधान कार्यक्रमों के आयोजन की व्यवस्था भी करती है।

हंसा मेहता समिति

1962 में राष्ट्रीय महिला शिक्षा परिषद् ने विद्यालय स्तर पर बालक तथा बालिकाओं के पाठ्यक्रम में अंतर होने अथवा नहीं होने की महत्वपूर्ण समस्या पर विचार करने हेतु श्रीमती हंसा मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया जिसे समिति की अध्यक्ष के नाम पर हंसा मेहता समिति के नाम से भी जाना जाता है। इस समिति ने विचार-विमर्श के उपरान्त सुझाव दिया है कि विद्यालय स्तर पर बालक तथा बालिकाओं के पाठ्यक्रम में अंतर नहीं होना चाहिए। समिति ने कहा कि भारत में जनतंत्रीय तथा समाजवादी समाज की स्थापना की प्रक्रिया चल रही है। अतः शिक्षा का सम्बन्ध व्यक्तिगत क्षमताओं, रुझानों तथा रूचियों से होना चाहिए, न कि यौन भेद से। अतः यौन के आधार पर पाठ्यक्रम में अंतर करने की आवश्यकता नहीं है। समिति ने यह भी कहा कि कोई भी ऐसा कदम नहीं उठाना चाहिए जो लड़के तथा लड़कियों के बीच विद्यमान अंतर को बढ़ाये।

कोठारी आयोग

1964 में डॉ. दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में शिक्षा आयोग, जिसने अपना प्रतिवेदन 1966 में दिया था, ने भी महिला शिक्षा की समस्या पर विचार किया तथा अपने सुझाव प्रस्तुत किये। कोठारी आयोग ने मानव संसाधनों के विकास, परिवारों की उन्नति तथा बच्चों के चरित्र निर्माण में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं की शिक्षा को अधिक महत्वपूर्ण स्वीकार किया तथा महिला शिक्षा के लगभग सभी पक्षों पर अपने विचार प्रस्तुत किये जिनमें से कुछ प्रमुख सुझाव अग्रांकित हैं

1. भारतीय संविधान में संकल्पित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए लड़कियों की अनिवार्य शिक्षा के लिए अधिकाधिक प्रयास किये जाएँ।
2. लड़कियों को अध्ययन के लिए लड़कों के विद्यालय में भेजने के लिए जनमत तैयार किया जाए।
3. उच्च प्राथमिक स्तर पर लड़कियों के लिए अलग विद्यालय खोले जाएँ।
4. लडकियों के लिए निःशुल्क छात्रावासों तथा छात्रवृत्तियों की व्यवस्था की जाये।
5. लड़कियों के लिए अल्पकालीन शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था की जाए।
6. लड़कियों की उच्च शिक्षा को प्रोत्साहित किया जाए।
7. लड़कियों के लिए पृथक कॉलेज स्थापित किये जाएँ।
8. शिक्षाशास्त्र, गृहविज्ञान तथा सामाजिक कार्यक्रमों के पाठ्यक्रम को समुन्नत करके लड़कियों के लिए अधिक उपयोगी बनाया जाये।
9. नारी शिक्षा के लिए अनुसन्धान इकाईओं की स्थापना की जाए।

10. विवाहित स्त्रियों के लिए अंशकालीन शिक्षा तथा अविवाहित स्त्रियों के लिए पूर्णकालिक शिक्षा की व्यवस्था की जाए।

11. स्त्री शिक्षा के संचालन के लिए केंद्र तथा राज्य स्तर पर प्रशासनिक तन्त्र का गठन किया जाए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986

1986 में घोषित नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में महिलाओं की शिक्षा में व्यापक परिवर्तन लाने की संकल्पना की गयी है। शिक्षा को स्त्रियों के स्तर में मूलभूत परिवर्तन लाने के साधन के रूप में प्रयोग करने को कहा गया है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति तथा कार्यान्वयन कार्यक्रम 1992 में स्त्री शिक्षा से सम्बंधित निम्न बातें सम्मिलित की गयी हैं-

1. पुनर्रचित पाठ्यक्रमों व पाठ्यपुस्तकों, नीति निर्धारकों व प्रशासकों के प्रशिक्षण व पुनश्चर्या कार्यक्रमों तथा शिक्षा संस्थानों की सक्रिय सहभागिता के द्वारा नए मूल्यों के विकास को बढ़ावा दिया जायेगा।
2. विभिन्न पाठ्यक्रमों के अंग के रूप में स्त्री अध्ययन को बढ़ावा दिया जाएगा।
3. शिक्षा संस्थाओं को स्त्री विकास के कार्यक्रमों को संचालित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा।
4. स्त्री निरक्षरता तथा प्राथमिक शिक्षा तक उनकी पहुँच तथा उसमें बने रहने के मार्ग की बाधाओं के निराकरण संबंधित प्रयासों को प्राथमिकता दी जायेगी।
5. विभिन्न स्तरों की व्यावसायिक, तकनीकी तथा वृत्तिक शिक्षा में महिलाओं की भागीदारी पर विशेष बल दिया जाएगा।
6. यौन विभेद न करने की नीति को बढ़ावा दिया जाएगा जिससे व्यावसायिक व वृत्तिक पाठ्यक्रमों से यौन प्रधानता को समाप्त किया जा सके तथा गैर-परंपरागत रोजगारों के साथ-साथ वर्तमान में विकसित हो रही तकनीकी में स्त्रियों को बढ़ावा दिया जा सके।

नई शिक्षा नीति 1986 तथा 1992 की कार्य योजना के परिणामस्वरुप महिलाओं की साक्षरता दर में निरंतर वृद्धि हुई। 1951 में जहाँ इनकी साक्षरता 7.3% थी, वहीं 1991 में 39.29% हो गयी। वर्ष 1981 से 1991 के मध्य महिलाओं की साक्षरता में 9.6% की वृद्धि दर्ज की गई, जबकि 1991 से 1997 के मध्य इसमें तीव्र वृद्धि (11% की) हुई। वर्ष 2001 की जनगणना रिपोर्ट के अनुसार महिलाओं की साक्षरता दर का प्रतिशत 54.16 हो गया। साक्षरता की यह दर सात वर्ष और उससे ऊपर आयु वाली बालिकाओं की जनसंख्या से सम्बंधित है। तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा की बात करें तो 1950-51 में जहाँ 6000 महिलाओं की इस क्षेत्र में भागीदारी थी वहीँ 1986-87 में इनकी संख्या 1.46 लाख हो गई जोकि 23 गुनी वृद्धि को प्रदर्शित करती है। प्राथमिक, उच्च

प्राथमिक तथा उच्च माध्यमिक स्तर पर नामांकित छात्राओं की संख्या में वृद्धि का विवरण निम्न प्रकार से है-

वर्ष	**प्राथमिक स्तर पर छात्राओं की संख्या (लाख में)**	**उच्चतर प्राथमिक स्तर पर छात्राओं की संख्या (लाख में)**	**उच्चतर माध्यमिक स्तर पर छात्राओं की संख्या (लाख में)**
1950-51	54	5	2
1960-61	114	16	7
1970-71	213	39	19
1980-81	285	68	34
1990-91	404	125	63
1994-95	468	158	84
1998-99	482	163	105
1999-2000	495	169	109

(स्रोत- सेलेक्टेड एजुकेशनल स्टेटिस्टिक्स-1999-2000; ह्यु मनरिसोर्स डेवलपमेंट, भारत सरकार)

स्पष्टतः प्राथमिक स्तर पर वर्ष 1950-51 में बालिकाओं का नामांकन प्रतिशत 28.1 से बढ़कर वर्ष 1999-2000 में 43.6 प्रतिशत हो गया और उच्च प्राथमिक स्तर पर इसी अवधि में यह प्रतिशत 16.1 से 40.4 हो गया। सारणी से स्पष्ट है कि 1950-51 से 1999-2000 के दौरान तीनों स्तरों पर बालिकाओं की नामांकन दर तेज़ हो रही है। 1950-51 में प्राथमिक स्तर पर 5.4 करोड़ बालिकायें नामांकित थीं और 1999-2000 में इनकी संख्या 49.5 करोड़ हो गयी जोकि 8 गुनी से अधिक वृद्धि को प्रदर्शित करती है। इसी प्रकार उच्च प्राथमिक स्तर पर इसी अवधि में 33.8 गुनी और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर 54.5 गुनी वृद्धि परिलक्षित होती है। इसी अवधि में बालकों की नामांकन दर बालिकाओं की नामांकन दर की तुलना में तीनों स्तरों पर कम पाई गई। इस प्रकार इसमें कोई संदेह नहीं है कि बालिकाओं में शिक्षा का प्रसार तीव्र गति से हुआ है। एक मात्र निराशाजनक पक्ष यह हो सकता है कि पुरुषों की तुलना में स्त्रियों की साक्षरता अभी भी बहुत कम है। वर्ष 2001 की जनगणना रिपोर्ट के अनुसार ग्रामीण पुरुषों की साक्षरता का प्रतिशत (71.40), ग्रामीण महिलाओं की साक्षरता के प्रतिशत (46.70) से बहुत अधिक है। जबकि इसके विपरीत शहरी पुरुषों की साक्षरता

(86.70%) एवं शहरी महिलाओं की साक्षरता (73.20%) के मध्य अंतर कम है। इससे पता चलता है कि ग्रामीण क्षेत्रों में स्त्री-शिक्षा के लिए विशेष प्रयास करने की आवश्यकता है।

फिर भी समग्र रूप से कहा जा सकता है कि स्त्री-शिक्षा के क्षेत्र में किये जा रहे प्रयासों का असर हुआ है, परन्तु सम्पूर्ण जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए यदि इसे अपर्याप्त कहा जाए तो यह अनुपयुक्त नहीं होगा। स्त्रियों की शिक्षा में भागीदारी सुनिश्चित करने और उसमें सुधार करने के लिए निम्नलिखित विशिष्ट कदम उठाये गए हैं-

1. श्यामपट्ट अभियान/ ऑपरेशन ब्लैकबोर्ड के अंतर्गत सरकार ने 1987-88 से एक लाख प्राथमिक स्कूल अध्यापकों के पद सृजन के लिए सहायता प्रदान की है जो स्त्रियों द्वारा ही भरे जाने थे। पाँच वर्षों में, (अर्थात 1992 तक) लगभग 75% पद भरे गए जिनमें से 60% महिला शिक्षिकाएँ थीं।
2. लड़कियों के लिए एन.ऍफ़.ई. केन्द्रों की संख्या 1991 तक 81000 हो गई थी जिनको 90% सरकारी सहायता मिलती थी।
3. 'महिला समाख्या' (स्त्रियों की समानता के लिए शिक्षा) परियोजना अप्रैल 1989 में प्रारंभ की गई जिसका उद्देश्य था प्रत्येक सम्बंधित गाँव में महिला संघ के माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने के लिए महिलाओं को तैयार करना। यह केंद्र सरकार की योजना है जिसमें उत्तर प्रदेश, कर्नाटक और गुजरात में महिला समाख्या समितियों को पूर्णरूपेण वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है। इंडो-डच योजना होने के कारण इसको नीदरलैंड सरकार से शत-प्रतिशत सहायता प्राप्त होती है। इस योजना का उद्देश्य शिक्षा की मांग पैदा करना और पूर्व-स्कूली, अनौपचारिक, प्रौढ़ तथा अविराम शिक्षा के लिए नवीन शैक्षणिक प्रविष्टियाँ प्रारंभ करना है।
4. सजग कार्यवाही द्वारा नवोदय विद्यालयों में लड़कियों का प्रवेश 28% तक सुनिश्चित किया गया है।
5. प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों में स्त्रियों के प्रवेश पर विशेष ध्यान दिया गया है।
6. ग्रामीण प्रकार्यात्मकता साक्षरता कार्यक्रम के अंतर्गत 1995 तक प्रौढ़ शिक्षा में कुछ नामांकित लोगों में से लगभग 55% तो स्त्रियाँ हीं थीं।

स्त्रियों की शिक्षा, सामाजिक कल्याण, स्वास्थ्य एवं अन्य क्षेत्रों में बहुमुखी विकास करने के लिए स्त्रियों हेतु राष्ट्रीय समिति का गठन 31 जनवरी, 1992 को किया गया। 30 मार्च, 1993 को राष्ट्रीय महिला कोष की स्थापना की गई। इसी क्रम में इंदिरा महिला योजना की शुरुआत 20 अगस्त, 1995 को की गई और बालिका समृद्धि योजना 20 अक्टूबर, 1997 को की प्रारंभ की गयी। ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं के लिए ग्रामीण महिला सशक्तीकरण एवं विकास परियोजना (स्वशक्ति योजना) के नाम से 16 अक्टूबर, 1998 को प्रारंभ की गयी योजना कई दृष्टियों से महत्वपूर्ण मानी गई है। इसी क्रम में स्कूल जाने वाली बालिकाओं हेतु निःशुल्क पुस्तकें देने के लिए भाग्यश्री योजना को प्रारंभ किया गया।

स्वतंत्रता के उपरान्त भारतीय समाज में कन्या शिक्षा को एक महत्वपूर्ण प्राथमिकता के रूप में स्वीकार किया जाता रहा है एवं इस दिशा में केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा प्रयास निरंतर जारी हैं। छह से चौदह आयु वर्ग के सभी बालक-बालिकाओं को निःशुल्क व अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने का राष्ट्रीय संकल्प तो दिसम्बर 2002 में हुए 86वें संविधान संशोधन के उपरान्त भारत के प्रत्येक बालक-बालिका का एक मूल अधिकार बन गया है। सर्व शिक्षा अभियान/ सबके लिए शिक्षा जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से सभी को शिक्षित करने के सरकारी प्रयासों का एक केन्द्रीय तत्व स्कूल न जाने वाली या स्कूल छोड़ देने वाली लड़कियों तक शिक्षा की पहुँच को बढ़ाना है। यह कार्यक्रम कन्या शिक्षा हेतु न केवल शिक्षा प्रणाली में वरन सामाजिक मान्यताओं व दृष्टिकोणों में व्यापक परिवर्तन लाने के महत्व व आवश्यकता को भली-भाँति स्वीकारता है। यही कारण है कि अब भारतवर्ष के सभी राज्यों में कन्या शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए द्वि-बिन्दु प्रयास किये जा रहे हैं। प्रथम, लड़कियों की शिक्षा तक पहुँच व ठहराव को विभिन्न प्रकार के उपाय करके बढाया जा रहा है एवं द्वितीय, प्रशिक्षण व अभिप्रेरण के द्वारा समाज में लड़कियों की शिक्षा की माँग को सृजित किया जा रहा है। कन्या शिक्षा के प्रचार-प्रसार एवं 6-14 आयु वर्ग में सभी बालक-बालिकाओं को शिक्षा प्रदान करने के संवैधानिक संकल्प का पूरा करने के निमित्त चलाये जा रहे सर्व शिक्षा अभियान के अंतर्गत अनेक योजनाओं का नियोजन व कार्यान्वयन किया जा रहा है। इनमें से कुछ प्रमुख योजनाएँ निम्नवत हैं-

1. कक्षा 8 तक के सभी लड़कियों को निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें देना।
2. विद्यालयों में लड़कियों के लिए अलग शौचालय बनवाना।
3. स्कूल छोड़ चुकी लड़कियों के लिए 'स्कूल की ओर' अभियान चलाना।
4. अधिक उम्र वाली लड़कियों के लिए ब्रिज पाठ्यक्रम चलाना।
5. विद्यालयों में न्यूनतम पचास प्रतिशत महिला अध्यापकों को नियुक्त करना।
6. लड़कियों के लिए समरूप अधिगम अवसर बढ़ाने के लिए अध्यापकों को संवेदनशील बनाना।
7. पाठ्यपुस्तकों सहित सभी शिक्षण-अधिगम सामग्री को यौन-संवेदनशील बनाना।
8. जन समर्थन व सहयोग प्राप्त करने के लिए सघन अभियान चलाना।
9. विद्यालयों में लड़कियों की उपस्थिति व ठहराव को सुनिश्चित करने के लिए नवाचारी उपाय करना।

सर्व शिक्षा अभियान के साथ-साथ प्रारम्भिक स्तर पर कन्या शिक्षा का राष्ट्रीय कार्यक्रम, महिला समाख्या, पूर्व-बाल्यकाल परिचर्या व शिक्षा तथा एकीकृत बाल विकास सेवा जैसे विभिन्न पाठ्यक्रमों के द्वारा कन्या शिक्षा के विविध पक्षों को सुदृढ़ करके लड़कियों तक शिक्षा के प्रकाश को पहुँचाने का प्रयास किया जा रहा है। इस सारी कवायद का केन्द्रीय पक्ष वस्तुतः समाज में कन्या शिक्षा की माँग को सृजित करना, कन्या शिक्षा में जन समुदाय विशेषकर महिलाओं की सहभागिता को बढ़ाने वाली परिस्थितियों

का निर्माण करना तथा कन्या शिक्षा को सुनिश्चित करने वाले दबाव कारकों को उत्पन्न करना है। इस कार्यक्रम में निस्संदेह समाज व माता-पिता की अभिप्रेरणा व सजगता, स्कूली क्रियाकलापों व समितियों में महिलाओं व माताओं की बढ़ती भूमिका एवं स्कूल, अध्यापक व समुदाय के परस्पर सम्बन्ध का सुदृढ़ीकरण जैसे उपाय परम आवश्यक एवं महत्वपूर्ण हैं। पूर्व बाल्यकाल परिचर्या व शिक्षा जहाँ लड़कियों को अपने छोटे भाई-बहन की देखभाल से विमुक्त करके उनके स्कूल जाने व वहाँ रुकने का मार्ग प्रशस्त करता है, वहीँ एकीकृत बाल विकास सेवा के द्वारा आंगनबाड़ी कार्यकत्रियों, प्राथमिक स्कूल अध्यापकों व स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करके पूर्व विद्यालय शिक्षा को बढ़ावा दिया जाता है। प्रारम्भिक स्तर पर कन्या शिक्षा के राष्ट्रीय कार्यक्रम के अंतर्गत अनेक कस्तूरबा गाँधी बालिका विद्यालयों की स्थापना की गई है जिनका उद्देश्य दुर्गम क्षेत्रों में मुख्यतः अनुसूचित जाति व जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग तथा अल्पसंख्यक समुदायों की लड़कियों की शिक्षा हेतु गुणवत्तापरक आवासीय शिक्षा सुविधाएँ उपलब्ध कराना है। केंद्र व राज्य सरकारों के इन प्रयासों से निःसंदेह हमारे देश में कन्या शिक्षा का तीव्र गति से प्रसार हुआ है एवं आशा की जा सकती है कि शीघ्र ही शिक्षा के क्षेत्र में व्याप्त यौन-असंतुलन समाप्त हो जायेगा।

अपनी प्रगति की जाँच करें 2

3. महिलाओं में विद्यमान निरक्षरता को दूर करने के लिए विभिन्न समितियों एवं आयोगों द्वारा किये गए प्रयासों पर अपने विचार प्रस्तुत करें।

……………………………………………………………………………………
……………………………………………………………………………………
……………………………………………………………………………………
……………………………..

3.5 स्त्रीवादी दृष्टिकोण से शिक्षा के अवसरों की असमानता की व्याख्या

पिछले दो दशकों में महिला साक्षरता दर में वृद्धि राष्ट्रीय विकास के सूचक के रूप में दर्ज होती रहीं हैं। इस लिहाज़ से राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर स्कूलों में लड़कियों के ज्यादा-से-ज्यादा दाखिले सुनिश्चित करना और लगातार उनकी शिक्षा जारी रखना शिक्षा नियोजन का एक बुनियादी लक्ष्य बन गया है। महिला साक्षरता व पढ़ाई जारी रखने तथा प्रजनन दर में गिरावट, इन दोनों सूचकों के बीच जो सकारात्मक सह-सम्बन्ध जोड़ा जाता है उससे भी महिला शिक्षा की माँग को बल मिला है। खासकर भारी आबादी वाले भारत जैसे देश के लिए विकास और शिक्षा से जुड़ी नीतियों को तय करने में इस तथ्य की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। चाहे सरकारी संस्थाएँ हों या गैर-सरकारी संस्थाएँ, सभी का ज़ोर इसी पर है। उदाहरण के तौर पर भारत सरकार द्वारा संचालित सर्व शिक्षा अभियान का आरम्भिक वर्षों में लक्ष्य

स्कूली शिक्षा से वंचित पाँच करोड़ नब्बे लाख बच्चों को स्कूल में दाखिल कराना था। इसमें लगभग साढ़े तीन करोड़ लडकियाँ थीं। आज की तारीख में दाखिला अभियान और स्कूली ढाँचों के विस्तार के जरिये सर्व शिक्षा अभियान 98% बच्चों को स्कूली शिक्षा से जोड़ पाने में सफल हुआ है। वह जेंडर आधारित अंतर भी उल्लेखनीय रूप से कम हुआ है जिस पर सर्व शिक्षा अभियान का विशेष जोर था। इस पूरे विमर्श में अन्तर्निहित मान्यता यह रही है कि अगर लड़कियों को स्कूल में लड़कियों को दाखिल कराया जाता है और वे लगातार स्कूल में पढ़ती रहे तो इससे स्वमेव उनका सशक्तीकरण हो जायेगा। स्कूली शिक्षा उनके लिए जीवन के विभिन्न मोड़ों पर विकल्प मुहैया करायेंगी और उनका अपनी ज़िन्दगी के फैसलों पर ज्यादा नियंत्रण होगा। इसमें दो राय नहीं कि स्कूली शिक्षा अपार-असीम सम्भावनाओं का द्वार खोलती हैं, लेकिन शिक्षा जादुई ढंग से हमेशा लड़कियों की नई भूमिकाओं के लिए तैयार नहीं कर पाती। दूसरे संस्थानों की तरह स्कूली शिक्षा भी स्थापित सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों और कायदों की पुनर्रचना करती रहती है। इस तरह मौजूदा सत्ता संबंधों को यह बरक़रार रखती है। इससे जाहिर होता है कि शैक्षिक कार्यक्रमों के लक्ष्यों में ज़रूरी नहीं कि एक लक्ष्य के रूप में सशक्तीकरण मौजूद ही हो। इसलिए लड़कियों और स्त्रियों की शिक्षा पर बात करते हुए पहले यह देखना महत्वपूर्ण है कि यह अपने केंद्रबिन्दु में किन लक्ष्यों और नतीजों को समेटे हुए है।

निस्संदेह अस्सी के दशक की सरकारी नीतियों से लेकर शिक्षा की हाल-फिलहाल की बहसों एवं अध्ययनों में जेंडर की प्रमुखता रही है। लेकिन यह मुख्य रूप से संख्यात्मक कारकों के दायरे में ही सीमित रही है। शायद संख्यात्मक बढ़ोत्तरी को ठोस रूप में नापा-जोखा जा सकता है, इस दृष्टि से इस पर फोकस करना आसान भी है। चूँकि महिला साक्षरता के बेहतर आँकड़े विकसित देशों की सूची में शामिल होने के लिए निर्धारक तत्व होते हैं, इसलिए लड़कियों एवं स्त्रियों की शिक्षा का उद्देश्य उपकरणवादी सोच से भी प्रभावित होता है। ऐसी स्थिति में उनकी शिक्षा दूसरे राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त करने का महज साधन बन जाती हैं। शिक्षा की प्रक्रियाओं में समता के मुद्दे को हम किस तरह से समझते हैं, यह बात चर्चा का विषय कम बन पाती है। जेंडर की बातें, जेंडर भेदभाव दूर करने के मकसद से लड़कियों व स्त्रियों की रूढ़ छवियों को दूर करने और उन्हें समान मौके उपलब्ध कराने तक सीमित रह जाती है। इन सबका एक बड़ा कारण है जेंडर को समझने का अराजनीतिक दृष्टिकोण। जब तक जेंडर के इस आयाम को नहीं देखा जायेगा, सशक्तीकरण को लड़कियों एवं स्त्रियों की शिक्षा के लक्ष्य के रूप में स्थापित करना मुश्किल होगा। इसलिए शिक्षा के विमर्श में जेंडर को बुनियादी तौर पर समानता तथा समता के मुद्दोंसे जोड़कर देखना ज़रूरी है।

स्कूल के भीतर क्या हो रहा है, कक्षा में किस तरह से और क्या पढाया जा रहा है, 'शिक्षित लड़के'/'शिक्षित लड़की' का क्या आदर्श गढ़ा जा रहा है, शिक्षक का रवैया क्या है और सीखने वाली बच्ची उसे किस रूप में ग्रहण करती है, शिक्षक/शिक्षिका के अपनी जेंडर, वर्ग या जाति से जुड़ी पहचान

के क्या अनुभव रहे हैं- इन पर प्रायः न तो नज़र रहती है और न ही इन पर कोई सवाल खड़े किये जाते हैं। 'स्त्रीत्व' और 'पुरुषत्व' को गढ़ने में स्कूली शिक्षा की भूमिका को लेकर शायद ही कभी शोध हुआ होगा।

अभी तक शिक्षा की विषय वस्तु क्या है और अलग-अलग पृष्ठभूमि की स्त्रियों के जीवन पर शिक्षा का क्या प्रभाव पड़ा है, ज्ञान क्या है, ज्ञान का निर्माण कौन करता है, किसके द्वारा किया गया ज्ञान निर्माण मुख्यधरा का हिस्सा बनता है- ये सब पहलू लगभग अछूते रहे हैं। इसलिए हमें यह ज़रुरत महसूस हुई कि स्त्रीवादी दृष्टिकोण से इन सब पहलुओं को समझने की कोशिश की जाए। स्त्रीवाद वह विचारधारा है जो स्त्रियों के खिलाफ होने वाले मौजूदा भेदभावों को पहचानती है और न्यायपूर्ण मानवीय, सामाजिक व्यवस्था की रचना करने की दिशा में काम करती है। यह आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक सभी मुद्दों पर अपना दृष्टिकोण विकसित करता है। स्त्रीवादी दृष्टिबिन्दु ने सार्वजनिक व निजी, संस्कृति, घरेलूपन, श्रम, नागरिकता और यौनिकता आदि बुनियादी अवधारणाओं की व्याख्या की है और बहुत जगह उन्हें चुनौती दी है। स्त्रीवादी सिद्धांत इन अवधारणाओं पर नए तरीके से सोचने की ज़रुरत को भी सामने लेकर आये हैं। इसलिए शैक्षिक विमर्श के सार्वजनिक तर्क-विमर्शों में जेंडर को प्रतिष्ठित कराने के प्रयास में स्त्रीवादी दृष्टिबिन्दु को सामने रखना आवश्यक है।

आमतौर पर जहाँ बाल शिक्षा की बात होती है, वहाँ वयस्क शिक्षा या फिर महिला शिक्षा की बात नदारत होती है। असल में शिक्षा को औपचारिक-अनौपचारिक, प्राथमिक-उच्च शिक्षा तथा सरकारी-गैरसरकारी के बीच बाँटकर सीमाबद्ध कर दिया गया है। इस विखंडन के दूरगामी परिणाम निकले हैं। दोनों क्षेत्र इतने अलग-थलग पड़ गए हैं कि वे एक-दुसरे के परिवेश में होने वाले स्वाभाविक बदलावों से अनजान रहते हैं। इन परिवर्तनों से पैदा हुई आवश्यकताओं से भी वे अनभिज्ञ रहते हैं। कभी-कभी दोनों के बीच होड़ भी लगी रहती है। इसका नतीजा यह है कि जेंडर संवेदनशीलता के नाम पर स्कूली शिक्षा या पाठ्यपुस्तकों में जो परिवर्तन पिछले दिनों किये गए हैं, वे संकीर्ण तरीके से जेंडर व शिक्षा को समीप लाती है। उदाहरणार्थ पिछले दिनों स्कूली पाठ्यपुस्तकों में लड़कियों की सकारात्मक छवियों की संख्या बढ़ी है। लेकिन स्त्रियाँ पहले की तरह घर और बच्चों को संभालने की पारंपरिक भूमिका में हीदर्शायी जाती हैं। स्थिति यह है कि लड़की के लिए तो आदर्श बचपन की छवि गढ़ ली गई है, लेकिन वयस्क महिला के बारे में न के बराबर सोचा गया है। ये पाठ्यपुस्तकें सबूत हैं कि विकास के राष्ट्रीय लक्ष्य प्राप्त करने और जनसंख्या नियंत्रण के लिए स्त्री शिक्षा की आवश्यकता तो है, परन्तु उत्पादक एवं श्रमिक के रूप में उनकी आर्थिक भूमिका को हमेशा की तरह अनदेखा किया जाता है। लड़कियों और स्त्रियों की शिक्षा के गहरे रूप से प्रभावित करने वाले मुद्दों, जैसे निर्धनता, परंपरा का निर्वाह, आधुनिकता, श्रम का बँटवारा आदि को स्कूली शिक्षा की विषय-वस्तु और पूरे ढाँचे में कोई जगह नहीं मिलती। यह सत्य है कि स्त्री अध्ययन का रिश्ता पिछले चार दशकों में महिला आन्दोलन से रहा है और महिला आन्दोलन के चिंतन एवं कार्यक्षेत्रों से भी वह प्रभावित रहा है। फिर भी स्त्री अध्ययन के लिए वयस्क महिला शिक्षा की कोई अहमियत नहीं रही है। इसका कारण यह है कि वहाँ न तो वह तात्कालिकता है जो महिला

आन्दोलन के अधिकार उल्लंघनों के मामले में होती है और न ही वह महिला समूहों या आन्दोलनों के हस्तक्षेप का क्षेत्र है। इस क्षेत्र में यदि कभी-कभी कुछ हस्तक्षेप हुए भी हैं तो उनसे सम्बंधित मामलों में ज्ञान निर्माण को प्राथमिकता नहीं दी गई है। दुर्भाग्यवश सार्वजनिक क्षेत्र में वयस्क महिला शिक्षा से जुड़े मुद्दे बहस का विषय नहीं बन पाए हैं। वयस्क महिला शिक्षा में साक्षरता तक स्त्रियों की पहुँच का सवाल ही शिक्षा में जेंडर का सबसे बड़ा सरोकार बन जाता है। इस सरोकार में समाजीकरण, समावेशीकरण अथवा बहिष्करण आदि प्रक्रियाओं की बहुत कम समझ होती है। जब हम स्त्रियों के शिक्षा प्राप्त करने के प्रयासों को उनकी सामाजिक परिस्थिति के सन्दर्भ में समझते हैं, तभी हम जेंडर के साथ समता के प्रश्नों को भी बेहतर तरीके से समझ पाते हैं।

जब ज्ञान का सृजन करने वाले वे लोग होते हैं जो सत्ता में नहीं हैं यानी जब वे राजा, पुरोहित, अमीर, सवर्ण पुरुष, साम्राज्यवादी आदि नहीं होते हैं तो क्या होता है? जब लिखने वाली कलम ऐसे ताकतवर लोगों के हाथों में नहीं, बल्कि स्त्रीवादी लेखिकाओं व इतिहासकारों के माध्यम से मुस्लिम औरतों, दलित मर्दों या आदिवासी महिलाओं के हाथ में दिखाई देती है तो हमें एक अलग आवाज सुनाई पड़ती है या हमें पढ़ने की एक नई शैली के दर्शन होते हैं। यही नहीं ज्ञान की विषय वस्तु भी उस ज्ञान के रचनाकारों के अनुभवों से निर्धारित होने लगती है। इससे समाज में सत्ता के कार्य-व्यापार को समझने में भी मदद मिलती है। साहित्य में संकलित बहुत सारी रचनाएँ अपनी तीखी समालोचना या चीज़ों को बकायदा सर के बल खड़ा करके न केवल देखने का नया नजरिया प्रस्तुत करतीं हैं, बल्कि इस बात को भी उजागर करतीं हैं कि समूचा ज्ञान कहीं-न-कहीं अवस्थित है, वह निरपेक्ष नहीं होता। आर्थिक और सामाजिक संरचनाएँ अपनी सारी ताकत को वर्चस्वकारी ज्ञान को सींचने में क्यों लगा देती हैं और वे जानने के अन्य तरीकों को क्यों ओझल कर देती हैं। हाशियाकरण के किसी अनुभव से गुजरने और उसकी आलोचनात्मक समझदारी विकसित करने के बाद हमें उस ज्ञान को एकदम पलट देने और नए सिरे से देखने की गुंजाईश बनती है। स्त्रीवादी शिक्षाविदों के लिए यह शिक्षाशास्त्र और इसके द्वारा की गयी सत्ता व सामाजिक ढाँचों की व्याख्या तथा शिक्षा के अपने अनुभवों को केंद्र में रखकर अपने जीवन के यथार्थ को देखना बहुत महत्वपूर्ण रहा है। यह स्त्रियों के सिद्धांतों और शिक्षा पद्धतियों के निर्धारण में भी बहुत उपयोगी रहा है। दरअसल ज्ञान के हस्तांतरण की प्रक्रिया काफी जटिल है और इसमें बहस के कई बिन्दु हैं। इस प्रक्रिया में बहुत साधारण कृत्यों के जरिये सत्ता सामने आती है। जैसे- कक्षा के भीतर कौन से शब्दों का प्रयोग किया जा रहा है और कौन से शब्दों को छोड़ा जा रहा है, इससे भी सत्ता तय होती है। जो लोग समुदायों के बीच काम कर रहे हैं, उनको न केवल इस बात से अवगत होना चाहिए कि ज्ञान के प्रभुत्वशाली रूपों तक पहुँच के जरिये वे किस तरह सत्ता का प्रयोग करते हैं, बल्कि उन्हें इस बारे में भी सचेत रहना चाहिए कि हाशिए पर खड़े लोगों के ज्ञान को किन तरीकों या प्रक्रियाओं से वैधता दी जा सकती है।

3.6 मीडिया और अन्य लोकप्रिय माध्यमों की भूमिका का विश्लेषण

साहित्य एवं मीडिया शिक्षा के अनुभवों का एक बहुरंगी चित्र प्रस्तुत करती है जिसमें रचनाकारों की सामाजिक अवस्थिति प्रतिबिंबित होती है। जेंडर, यौनिकता, वर्ग, जाति और धर्म आदि इन सभी के साथ शिक्षा अविभाज्य रूप से बंधी होती है। इन माध्यमों के जरिये हम उन प्रक्रियाओं को देखने की कोशिश करते हैं जिनकी मार्फ़त किसी ऐतिहासिक क्षण में शिक्षा विकसित होती है- यानि समाज किसी ख़ास काल में शिक्षा की क्या ज़रुरत महसूस करता है, किस तरह के महिला और पुरुष को आदर्श माना जाता है, किसी ख़ास मौके पर किस तरह के राष्ट्र या समुदाय या परिवार को अनिवार्य माना जाता है। शिक्षा का एक महत्वपूर्ण आयाम यह तय करना रहा है कि कौन से ज्ञान को वैध और प्रसार के योग्य माना जा सकता है। शिक्षा उस वैध माने जाने वाले ज्ञान में सत्ता का बोध पैदा कर देती है। लिहाजा धीरे-धीरे कुछ ख़ास तरह की लिखित सामग्री और कुछ ख़ास विचारों- ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, धार्मिक, साहित्यिक- को वैधता और विश्वसनीयता मिल जाती है जो जनसंचार के विभिन्न माध्यमों एवं मीडिया द्वारा समाज के अलग-अलग समूहों एवं वर्गों तक पहुँचते हैं एवं उनकी सोच में परिवर्तन लाने के साथ-साथ उन्हें अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति सजग एवं जागरूक बनाते हैं। शिक्षा व् ज्ञान के प्रचार एवं प्रसार के लिए सरकार को दूरदर्शन व रेडियो के माध्यम अधिक-से-अधिक उपयोग में लाना चाहिए। शिक्षाप्रद कार्यक्रमों/सीरियल के माध्यम से स्त्रियों व कन्याओं को अपने अधिकार, समाज व देश की ज्वलंत समस्याओं से अवगत कराना चाहिए। उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त होने के उपायों, स्वच्छता और आधुनिक उपकरणों के विषय में जानकारी दी जानी चाहिए। प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम गाँवों में स्कूल खोल देने मात्र से सफल नहीं हो सकते। यदि दूरदर्शन पर प्रौढ़ शिक्षा देने का कार्यक्रम प्रारंभ किया जाए तो यह योजना अधिक प्रभावी होगी।

अपनी प्रगति की जाँच करें 3

4. महिला शिक्षा में विद्यमान असमानता एवं अवसरों दोनों के सन्दर्भ में स्त्रीवादी शिक्षाविदों के विचारों का विश्लेषण करें।

....

....

.

5. आपके विचार से मीडिया तथा जनसंचार के अन्य माध्यम स्त्री शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार में किस प्रकार अपनी भूमिका सुनिश्चित करते हैं? विवेचना कीजिए।

....

....

3.7 सारांश

स्त्रियों की स्थिति में आये परिवर्तन का श्री स्त्री शिक्षा के प्रसार को जाता है। वैदिक तथा मुस्लिम काल में स्त्री शिक्षा की सुविधाएँ अत्यंत सीमित तथा केवल समाज मेंसम्भ्रांत वर्ग की महिलाओं को उपलब्ध थीं। ब्रिटिश काल के प्रारम्भिक वर्षों में भी स्त्री शिक्षा उपेक्षित ही रही परन्तु बाद के वर्षों में स्त्री शिक्षा का विकास हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त स्त्री शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया। दुर्गाबाई देशमुख समिति, हंसा मेहता समिति, कोठारी आयोग, नई शिक्षा नीति 1986 आदि में भी स्त्री शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है। यद्यपि स्वतंत्रता के उपरान्त स्त्री शिक्षा का काफी विकास हुआ है परन्तु अभी भी स्त्री शिक्षा की स्थिति को संतोषप्रद नहीं माना जा सकता है। शैक्षिक अवसरों में समानता का अभाव, लड़कियों की शिक्षा के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण, लड़कियों के अपव्यय व अवरोधन का अधिक होना, पाठ्यक्रम का दोषपूर्ण होना, दोषपूर्ण प्रशासन, अध्यापिकाओं का अभाव, धन की कमी तथा लड़कियों के लिए व्यावसायिक व तकनीकी शिक्षा की कमी आदि स्त्री शिक्षा की कुछ प्रमुख समस्याएँ हैं। इन समस्याओं का समाधान स्त्री शिक्षा का प्रसार किया जा सकता है। इसमें मीडिया की अहम् भूमिका है।

3.8 अपनी प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

1. 3.4 भारत में महिला शिक्षा का इतिहास
2. 3.3 लड़कियों की शिक्षा- असमानता और प्रतिरोध
3. 3.5 भारत में लड़कियों की शिक्षा की वर्तमान स्थिति एवं चुनौतियाँ
4. 3.6 स्त्रीवादी दृष्टिकोण से शिक्षा के अवसरों की असमानता की व्याख्या
5. 3.7 मीडिया और अन्य लोकप्रिय माध्यमों की भूमिका का विश्लेषण

3.9 सन्दर्भ पुस्तकें

- गुप्ता, एस. पी. तथा गुप्ता, अलका (2013) भारतीय शिक्षा का इतिहास, विकास एवं समस्याएँ, शारदा पुस्तक भवन, इलाहाबाद
- सिंह, सुमित्रा तथा सिंह मैथिली रमण प्रसाद (2004) शिक्षा के विविध आयाम, एस.पी. भार्गव बुक हाउस, आगरा
- आहूजा, राम (1995) भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स
- आहूजा, राम (2000) भारतीय समाज, रावत पब्लिकेशन्स
- आधी दुनिया (2001), बी.एम.एन. प्रकाशन लखनऊ
- जेंडर और शिक्षा रीडर भाग 1 एवं 2 (2011), निरंतर

इकाई- 4
विद्यालयों में जेंडर असमानता

इकाई-4: विद्यालयों में जेंडर असमानता

इकाई की संरचना

4.0 उद्देश्य
4.1 प्रस्तावना
4.2 स्कूली अनुभवों जैसे पाठ्यचर्या, शिक्षणशास्त्र और विद्यालय गतिविधियों की स्त्रीवादी दृष्टि व्याख्या
4.2.1 विद्यालय पाठ्यचर्या की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या
4.2.2 विद्यालय शिक्षणशास्त्र की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या
4.2.3 विद्यालय गतिविधियों की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या
4.3 जेंडर के सन्दर्भ में प्रच्छन्न पाठ्यक्रम, कक्षागत प्रक्रियाओं द्वारा जेंडररुढियों का पुनर्बलन
4.4 जेंडर संवेदनशील शिक्षाशास्त्र, जेंडर की दृष्टि से विद्यालयी अनुभवों पर मनन एवं युक्तियाँ, शिक्षकों की संवेदनशीलता
4.5 सारांश
4.6 अपने प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर
4.7 अभ्यास प्रश्न
4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन कर आप-

1. विद्यालय पाठ्यचर्या, शिक्षणशास्त्र और विद्यालय गतिविधियों की स्त्रीवादी दृष्टि से विवेचना कर सकेंगे।
2. जेंडररुढियों का पुनर्बलन करनेवाली कक्षागत प्रक्रियाओं की समीक्षा कर सकेंगे।
3. जेंडर संवेदनशील शिक्षाशास्त्र की आलोचनात्मक व्याख्या कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

समाज में महिलाओं एवं पुरुषों के लिए जीवन के हर क्षेत्र में समान अधिकार एवं सुविधाएँ सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि हमारी शिक्षा व्यस्था का स्त्रीवादी दृष्टि से विश्लेषण कर पुनर्गठन किया जाय ताकि बच्चे जेंडर समानता के प्रति जागरूक एवं संवेदनशील बन सकें। उपरोक्त सन्दर्भ में प्रस्तुत इकाई जेंडर समानता के सन्दर्भ में विद्यालयी गतिविधियों की विस्तृत विवेचना करता है तथा हमें जेंडर संवेदनशील शिक्षाशास्त्र का अवबोध भी कराता है।

4.2 स्कूली अनुभवों जैसे पाठ्यचर्या, शिक्षणशास्त्र और विद्यालय गतिविधियों की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या

स्त्रीवादी विचारधारा एक ऐसी विचारधारा है जो विश्वास करती है कि महिलाओं एवं पुरुषों को जीवन के हर क्षेत्र में समान अधिकार, स्वायत्तता एवं सुविधाएँ प्राप्त हों। इस उप-इकाई में आप विभिन्न विद्यालयी अनुभवों जैसे पाठ्यचर्या, शिक्षणशास्त्र एवं विद्यालय गतिविधियों का स्त्रीवादी दृष्टिकोण से अध्ययन करेंगे।

4.2.1 विद्यालय पाठ्यचर्या की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या

विद्यालयी पाठ्यचर्या को जेंडर संवेदनशील बनाने के लिए इसे विद्यार्थियों के सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश में विद्यमान जेंडर अस्मिता चुनौतियों से जोड़ने की आवश्यकता है। विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रम में ऐसे प्रकरण सम्मिलित किये जायें जिससे बच्चें जेंडर विमर्शों की समीक्षा कर सकें। इन विमर्शों को पढ़ाने के लिए वाद-विवाद, प्रश्नोत्तरी, विचार-विमर्श, संघर्ष समाधान जैसे युक्तियों को व्यवहार में लाया जाना चाहिए। विद्यालयी पाठ्यचर्या के स्त्रीवादी उन्मुखीकरण के लिए ऐसे शिक्षक एवं शिक्षिकाएँ जो स्त्री अध्ययन में कार्यरत हैं, सामाजिक कार्यकर्ता जो स्त्री सशक्तिकरण के लिए कार्य कर रहे हैं तथा स्त्रीवादी आलोचकों के अनुभवों को पाठ्यचर्या के साथ एकीकृत किये जाने की आवश्यकता है। स्त्रीवादी या जेंडर विमर्शों को विद्यालय पाठ्यचर्या में समावेशित करने के लिए विभिन्न आकादमिक विषयों के शिक्षण तथा पाठ-सहगामी गतिविधियों के आयोजन के लिए अंतरानुशासनिक उपागमों को व्यवहार में लाया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि शिक्षक को भौतिकी विषय में '21वीं सदी में अंतरिक्ष तकनीकी का विकास' नामक प्रकरण को पढ़ाना है तो वे कल्पना चावला तथा सुनीता विलियम्स जैसे महिला अंतरिक्ष वैज्ञानिकों का उदाहरण देकर बच्चों को विभिन्न अंतरिक्ष तकनीकी उपलब्धियों से परिचित कराते हुए समाज में स्त्रियों की बदलती भूमिका के प्रति उनका ध्यान आकर्षित कर सकते हैं। जीव विज्ञान में प्रजनन तंत्र जैसे प्रकरण को पढ़ाने के लिए किशोर एवं किशोरियों के शारीरिक बदलाव तथा इसके प्रतिफल उनके प्रति समाज में लोगों का बदलता व्यवहार भी एक स्त्रीवादी विमर्श बन सकता है। सामाजिक विज्ञान विषय में 'विभिन्न समुदायों की जीवन शैली' प्रकरण के अध्ययन के लिए 'समाज में स्त्री एवं पुरुषों के बीच कार्य का विभाजन' विषयक विमर्श के रूप में उपयोग में लाया जा सकता है। इन विमर्शों को पाठ्यक्रम में समावेशित करने के लिए शिक्षकों को विज्ञान, भूगोल, नागरिक शास्त्र, साहित्य आदि कई विषयों के अवधारणाओं को पाठ से जोड़ना पड़ता है। साथ-ही साथ पाठ सहगामी गतिविधियों जैसे वाद-विवाद, निबंध प्रतियोगिता, नाटक मंचन के लिए स्त्रीवादी विमर्शों को विषयक के रूप में चुना जा सकता है तथा बच्चों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे विभिन्न अकादमिक विषयों से प्राप्त ज्ञान को मिलाकर अपने उत्तर या विचार बिंदु तैयार करें। विभिन्न विषयों के प्रत्ययों को

कार्य विभाजन, शरीरिक विषमताएँ, लैंगिकता, विवाह प्रथा, पितृत्व व्यवस्था, परिवार, जाति, समुदाय, अर्थव्यवस्था, आधुनिकता आदि विषयक से जोड़कर पढ़ाया जाना चाहिए।

परम्परागत जेंडर संवेदना शून्य आकलन पद्धति में बालिकाएँ कई बार शिक्षकों से घबराकर (अपने रुढ़िवादी सामाजिक अस्मिता के कारण) या पारिवारिक समस्याओं के कारण प्रश्नों के जवाब नहीं दे पाती या जवाब देने में हिचकिचाहट महसूस करती हैं, जिससे उनकी प्रतिभा का सही रूप से मूल्यांकन नहीं हो पाता। जेंडर समानता को प्रोत्साहित करने के लिए आकलन एवं मूल्यांकन हेतु वैकल्पिक आकलन युक्तियों जैसे-साक्षात्कार, स्व-मूल्यांकन, समूह साथी मूल्यांकन, अवलोकन, पोर्टफोलियो आदि को प्रयोग में लाया जाना चाहिए। ये युक्तियाँ उनके प्रत्यक्ष तथा प्रच्छन्न दोनों ही व्यवहारों का समुचित रूप से आकलन करने के लिए सक्षम होती हैं।

विभिन्न विषयों के पाठ्य पुस्तक तथा अन्य पाठ्यचर्या सामग्री में स्त्रीवादी विमर्शों, स्त्रियों से जुड़े उदाहरण एवं प्रसंगों, उनके चित्रों, कहानियों, जीवनवृन्त आदि को उपयुक्त स्थान दिया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए- साहित्य की कहानियों या कविताओं में महिला कवियों तथा कहानीकारों के रचनाओं को सम्मिलित करना चाहिए। ऐसी रचनाएँ जो स्त्रियों के उत्कर्ष तथा संघर्ष का परिदृश्य प्रस्तुत करती हैं उन्हें विशेष रूप से शामिल करना चाहिए। सामाजिक विज्ञान में विभिन्न प्रकरणों के विवरण के साथ स्त्रीवादी विमर्शों, जहाँ-जहाँ संभव हो, अवश्य जोड़ना चाहिए। मौलिक अधिकारों तथा मौलिक कर्तव्यों को पढ़ाते वक्त वर्तमान समाज में स्त्रियों की स्थिति को प्रसंग के रूप में लिया जा सकता है। इसके द्वारा बच्चों में जेंडर संवेदनशीलता का विकास होता है।

अपने प्रगति की जाँच करें 1

1. जेंडर समानता को बढ़ावा देने के लिए पाठ्य-पुस्तक का निर्माण किस प्रकार किया जाना चाहिए? व्याख्या करें।

....

....

4.2.2 शिक्षणशास्त्र की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या

समाज में विद्यमान जेंडर रुढ़ीवादी विचारधाराओं को दूर करने तथा बालिकाओं को समाज के एक सशक्त अंग के रूप में विकसित करने के लिए यह आवश्यक है कि वे स्वयं अपनी आवश्यकताओं एवं समाज द्वारा प्रदत्त अपनी भूमिका की आलोचनात्मक समझ विकसित करें तथा अपने समस्याओं के समाधान हेतु आवश्यक प्रयास करें। इस दिशा में स्त्रीवादी शिक्षण अभ्यास द्वारा स्त्री सशक्तिकरण को

बढ़ावा दिया जा सकता है। इसके अंतर्गत बालिकाओं के आवश्यकता, अनुभव, अभिक्षमता एवं अभिरुचि के अनुसार अधिगम अनुभवों के चयन पर विशेष बल दिया जाता है, जिससे कक्षा में उनकी अभिव्यक्ति को व्यापक स्थान दिया जा सके। इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि वे एक आलोचनात्मक पर्यवेक्षक के रूप में अपने समस्याओं का अध्ययन करें- चाहे समस्याएँ कोई समाजिक, आर्थिक या राजनीतिक विमर्श हो या पाठ संबंधी अभ्यास प्रश्न। कक्षा विचार-विमर्श तथा प्रस्तुति में बालिकाओं की पहल तथा सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित की जानी चाहिए। इसके लिए आलोचनात्मक शिक्षणशास्त्र की युक्तियों जैसे संघर्ष समाधान तकनीक को व्यवहार में लाया जा सकता है। इसमें ऐसे सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विमर्शों को पाठ सन्दर्भ के रूप में व्यवहार में लाया जाता है जो बालिकाओं के जीवन से जुड़े होते हैं तथा उनकी समाज में भूमिका तथा अस्मिता का निर्धारण करते हैं। जैसे- घर के आर्थिक वृत्ति में स्त्री की भूमिका, दहेज़ प्रथा, सरपंच सभा में स्त्रियों की भागीदारी, बाल विवाह, स्त्री शिक्षा, बच्चों की परवरिश, सामूहिक पर्व-त्योहार में स्त्रियों की भागीदारी आदि विषय जिससे स्त्रियों को प्रायः जूझना पड़ता है, उन्हें संघर्ष समाधान अधिगम रणनीति के लिए सन्दर्भ के रूप में व्यवहार में लाया जा सकता है। ग्राम पंचायत या स्थानीय सरकार जैसे प्रकरण के अध्ययन के लिए सरपंच सभा में स्त्रियों की भागीदारी जैसे राजनीतिक विमर्श को संघर्ष समाधान का हिस्सा बनाकर बच्चों में जेंडर समानता के प्रति जागरूकता तथा संवेदनशीलता पैदा की जा सकती है। वे शिक्षिका एवं अन्य सहपाठियों के साथ विचार विमर्श कर स्त्रियों के वैकल्पिक जीने के तरीके तथा समाज एवं राजनीति में उनकी बदलती भूमिका से परिचित होते हैं। परिणामस्वरूप सभी बच्चे, चाहे वे बालक हों या बालिकाएँ, उनमें जेंडर समानता का भाव पैदा होता है।

स्त्रीवादी शिक्षणशास्त्र समाज, राष्ट्र एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विद्यमान स्त्रीवादी मूल्यों को शिक्षण-अधिगम अनुभवों का हिस्सा बनाकर बच्चों में जेंडर असमानता के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण पैदा करता है। मूल्यों जैसे स्त्रियों की समाज के सभी गतिविधियों में बराबर की सहभागिता, सरकारी पदों में स्त्रियों के लिए आरक्षण, विभिन्न वृत्तिक क्षेत्रों में स्त्रियों के क्षमताओं का सम्मान, स्त्रियों के अभिरुचि तथा अनुभवों को बराबर का दर्जा आदि को समावेशित कर शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया की रूपरेखा तैयार की जाती है। इसमें शिक्षकों के मान्यताओं तथा अभिप्रेरणा पर विशेष ध्यान दिया जाता है। यानि स्त्री समाज के प्रति उनके दृष्टिकोण सकारात्मक हैं या नकारात्मक। उन्हें समस्त प्रक्रिया के दौरान स्वयं से ये प्रश्न पूछते रहने चाहिए कि हम क्यों पढ़ाते हैं? तथा पढने के उपरान्त विद्यार्थी के सोच तथा व्यवहार में क्या परिवर्तन होगा?

स्त्रीवादी शिक्षणशास्त्र अन्य प्रगतिशील शिक्षणशास्त्र की भाँति ज्ञान को सामाजिक रूप से निर्मित मानता है। इसके लिए ज्ञान का स्वरुप विषयनिष्ठ होता है क्योंकि यह व्यक्ति या समुदाय विशेष के

विषयनिष्ठ अनुभवों तथा प्रत्यक्षीकरण को ज्ञान निर्माण का आधार मानता है। ज्ञान निर्माण या अधिगम के प्रक्रिया में बालकों एवं बालिकाओं के विभिन्न अनुभवों तथा विचारों को सम्मिलित कर उन्हें ज्ञान के बहुआयामी स्वरुप को देखने का अवसर प्रदान करता है, जिससे उनमें प्रकरण या विमर्श के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण पैदा होता है।

स्त्रीवादी शिक्षणशास्त्र के अंतर्गत शिक्षक एवं बच्चों तथा बालक एवं बालिकाओं को बराबर का दर्जा दिया जाता है। इसमें बच्चें विशेष रूप से बालिकाएँ अपनी सक्रिय सहभागिता के लिए प्रोत्साहित की जाती है। इसमें बालकों एवं बालिकाओं तथा बच्चों एवं शिक्षकों के मध्य पारस्परिक सामंजस्य का संबंध होता है। वे दोनों एक-दूसरे से सीखते हैं न कि केवल शिक्षक से बच्चों या बालकों से बालिकाओं की ओर ज्ञान का स्थानान्तरण होता है। बच्चा संप्रेषण प्रक्रिया का अहम हिस्सा होता है। शिक्षक के साथ-साथ बालक एवं बालिकाएँ भी अधिगम प्रक्रिया में संलग्न होते हैं, वे एक-दूसरे के भावनाओं, संस्कृति एवं विचारों का सम्मान करते हैं, उनके कुछ पारस्परिक लक्ष्य होते है जिन्हें पूरा करने के लिए वे एक-दूसरे की क्षमताओं को उपयोग में लाते हैं। यह बच्चों में समाज में विद्यमान जेंडररुढियों के प्रति समीक्षात्मक दृष्टिकोण विकसित करता है। यह मानता है कि जेंडर ज्ञान निर्माण की प्रक्रिया तथा बच्चों में समाज द्वारा प्रदत्त अपनी भूमिका के प्रति विचारशील चिंतनप्रवृत्ति विकसित करने के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रभावशाली उपकरण है। यह केवल इस बात पर ही बल नहीं देता कि क्या पढ़ना चाहिए बल्कि यह भी बताता है कि किस प्रकार पढ़ना चाहिए?

अपने प्रगति की जाँच करें 2

2. स्त्रीवादी शिक्षणशास्त्र से आप क्या समझते हैं? उदाहरण सहित वर्णन करें।

....

....

4.2.3 विद्यालय गतिविधियों की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या

विद्यालयी शिक्षा को जेंडर समावेशी बनाने के लिए विद्यालयी संस्कृति को परिवर्तित करने की आवश्यकता है। यह अवधारणा है कि पूर्व एवं प्राथमिक शिक्षा के लिए शिक्षिकाएँ, शिक्षकों से बेहतर होती हैं क्योंकि वे छोटे बच्चों का ध्यान आसानी से रख सकती हैं। इसी प्रकार से बालिकाओं के पठन कौशल पर उनके लेखन कौशल की तुलना में अधिक ध्यान दिया जाता है, वहीँ बालकों को लेखन कौशल के विकास के लिए अधिक प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार के पूर्वाग्रह या सोच में अनिवार्य परिवर्तन किया जाना चाहिए।

माध्यमिक विद्यालय स्तर पर गणित तथा विज्ञान जैसे विषयों के शिक्षण के लिए शिक्षकों को अधिक उपयुक्त माना जाता है, वहीं भाषा, कला, संगीत, कढाई-बुनाई, गृह विज्ञान जैसे विषयों के लिए शिक्षिकाओं को अधिक महत्त्व दिया जाता है। इसके अलावा विद्यालय में बच्चों को पानी पिलाने, विद्यालय की साफ़-सफाई आदि के लिए भी महिलाओं को अधिक उपयुक्त माना जाता है। इस विद्यालयी परम्परा को भी परिवर्तित किया जाना चाहिए। जब विद्यालय में अभिवावक सम्मलेन, कार्यशाला या संगोष्ठी, वार्षिकोत्सव जैसे कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं तो कक्ष या हॉल के सजावट की जिम्मेदारी शिक्षिकाओं एवं बालिकाओं को दी जाती है, जो कहीं-न-कही समाज द्वारा प्रदत्त उनके रुढ़िवादी भूमिका का समर्थन करता प्रतीत होता है। इन विद्यालयी रिवाजों में बदलाव लाकर विद्यालय गतिविधियों में जेंडर समानता को प्रोत्साहित किया जा सकता है।

बालक एवं बालिकाओं के विद्यालयी यूनिफार्म में भी असमानता देखने को मिलती है। बालिकाओं को स्कर्ट, सलवार या फ्रॉक पहनने के लिए बाध्य किया जाता है, उन्हें लड़कों की तरह पेंट पहनने की अनुमति नहीं दी जाती जो उनके लिए अधिक आरामदायक हो सकता है।
बालिकाओं या किशोरियों को वृत्तिक परामर्श प्रदान करते वक्त उन्हें गृह विज्ञान, कला तथा मानविकी जैसे विषय चुनने की सलाह दी जाती है। वहीं बालकों को गणित, विज्ञान तथा तकनीकी जैसे विषयों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार विद्यालयी परंपरा समाज में विद्यमान जेंडर आधारित कार्य या वृत्तिक विभाजन का प्रबलन करता है। इस दिशा में बदलाव लाने की नितांत आवश्यकता है।

कभी-कभी बालक किसी घटना या प्रसंग पर भावुक होकर रोने लगते हैं तो यह कहा जाता है कि क्या वे बालिकाएँ हैं, उनका ह्रदय क्या बालिकाओं की तरह कमजोर है तथा उन्हें एक पुरुष के समान दृढ व्यवहार करने की सलाह दी जाती है। वहीं दूसरी ओर यदि बालिकाएँ क्रिकेट, फुटबाल, कुश्ती आदि खेलों में हिस्सा लेना चाहती हैं तो उन्हें कमजोर बताकर झिड़क दिया जाता है।

विद्यार्थी क्लब द्वारा जब कोई कार्यशाला, प्रदर्शनी, मेला आदि गतिविधियों का आयोजन किया जाता है तो बालकों को समान खरीदने, प्रदर्शनी या कार्यशाला का प्रारूप तैयार करने, मॉडल या चार्ट का अवधारणा मानचित्रण करने एवं इसके कठिन अवयवों की रूपरेखा तैयार करने तथा तकनीकी व्यवस्था उपलब्ध करने का कार्य प्रदत्त किया जाता है, वहीं बालिकाओं को भोजन परोसने, कमरे की सजावट करने, सभी के बैठने की व्यवस्था करने तथा मॉडल या चार्ट आदि में रंग भरने तथा अन्य कलाकारी करने की जिम्मेदारी दी जाती है। इस प्रकार की परम्परा के संवर्धन को रोकने की आवश्यकता है।

विद्यालय में जब संगीत, पेंटिंग, रंगोली, कक्षा सजावट जैसी गतिविधियाँ आयोजित की जाती है तो इसमें बालिकाओं को सहभागिता करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। वहीँ बालकों को समाज में उनकी परम्परागत भूमिका का एहसास कराते हुए इन गतिविधियों में हिस्सा लेने के लिए हतोत्साहित किया जाता है, जिससे उनमें ऐसे गतिविधियों तथा बालिकाओं के क्षमताओं के प्रति उपेक्षा का भाव पैदा होता है। वहीँ दूसरी ओर विज्ञान प्रतियोगिता, वाद-विवाद, निबंध लेखन आदि के लिए बालकों को विशेष रूप से प्रेरित किया जाता है, जिससे उनमें समाज के श्रेष्ठ वर्ग का हिस्सा होने का एहसास कराया जाता है। इन गतिविधियों में बालिकाओं की भागीदारी की अवहेलना की जाती है। साथ-ही-साथ इन गतिविधियों के प्रकरण में महिला वैज्ञानिक, महिला समाजकर्ता, महिला शिक्षाविद तथा महिला राजनीतिज्ञ का स्थान न के बराबर होता है जो जेंडररुढियों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समृद्ध करता है।

अंतरर्विद्यालय स्तर पर जब कोई प्रतियोगिता जैसे विज्ञान ओलंपियाड, प्रदर्शनी, वाद-विवाद एवं निबंध जैसी प्रतियोगिताएँ आयोजित की जाती हैं तो बालिकाओं की उपेक्षा कर बालकों का चयन प्रतियोगिता के लिए किया जाता है। क्योंकि यह माना जाता है कि बालक, बालिकाओं की तुलना में विद्यालय के आस- पास तथा नजदीकी समुदायों एवं राज्यों के परिवेश से अधिक परिचित हैं तथा प्रतियोगिता के दौरान उत्पन्न होनेवाली बाधाओं का बालिकाओं की तुलना में अधिक साहसपूर्ण ढंग से सामना कर सकते हैं। यह विद्यालयी रीतियाँ समाज में विद्यमान इस अवधारणा को संवर्धित करता है कि स्त्रियाँ, पुरुषों की तुलना में कम साहसी तथा सक्षम होती है। उनका कार्य क्षेत्र अपने घर या अधिक-से-अधिक आस-पड़ोस तक ही सीमित होता है। उन्हें नजदीकी समुदायों तथा राज्यों के परिवेश, शिक्षा एवं प्रशासन व्यवस्था की जानकारी पुरुषों की तुलना में बहुत कम होती है। अतः बालिकाएँ अंतरराजकीय तथा अंतरसामुदायिक स्तर पर आयोजित होनेवाले विद्यालयी प्रतियोगिताओं के लिए अयोग्य मानी जाती हैं।

विद्यालय में आयोजित होनेवाले प्रार्थना सभा में संगीत या प्रार्थना के आयोजन की जिम्मेदारी बालिकाओं को दी जाती है तथा बालकों को सुविचार तथा समाचार कथन जैसी गतिविधियों को आयोजित करने का उत्तरदायित्व होता है। यह कही-न-कहीं समाज के जेंडर रुढ़िवादी विचारधारा का समर्थन करता है।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि विद्यालय पाठ्यचर्या, शिक्षणशास्त्र एवं विद्यालयी गतिविधियों में स्त्रीवादी तत्वों को समावेशित कर बच्चों में समाज में विद्यमान जेंडररुढियों के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण पैदा किया जा सकता है तथा उन्हें इनसे निदान के उपाय भी सुझाए जा सकते हैं ताकि बालक एवं बालिकाएँ एक-दूसरे का सम्मान करें तथा समाज द्वारा प्रदत्त अपने अस्मिता की व्यापक समीक्षा कर सकें।

अपने प्रगति की जांच करें 3

3. जेंडर समानता को बढ़ावा देने के लिए विद्यालय गतिविधियों का आयोजन किस प्रकार किया जाना चाहिए? अपने विचार प्रस्तुत करें।

....

....

4.3 जेंडर के सन्दर्भ में प्रच्छन्न पाठ्यक्रम, कक्षागत प्रक्रियाओं द्वारा जेंडररुढियों का पुनर्बलन

विद्यालय प्रशासन विभिन्न विषयों के पाठ्क्रम को जेंडर समावेशी तो बताता है और यह दावा करने की कोशिश करता है कि इसकी पाठ्यवस्तु विद्यार्थियों के सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश से जुडी हुई है तथा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से समाज में विद्यमान जेंडर अस्मिता चुनौतियों को सामने लाने का प्रयास करता है। किन्तु, वास्तविकता बहुत हद तक इससे परे है। विभिन्न विषयों में प्रच्छन्न पाठ्यकम (हिडेन पाठ्यक्रम) यानि कक्षा का वातावरण, संस्कृति या अंतःक्रिया जेंडररुढियों का पुनर्बलन करती प्रतीत होती है। शिक्षक द्वारा संचालित कक्षा प्रक्रियाएँ प्रायः जेंडर संवेदन शून्य होती हैं। जब कभी पाठ्यवस्तु से जेंडर विमर्शों को एकीकृत करने का अवसर होता है या आवश्यकता होती है, शिक्षक इन विमर्शों से पाठ्यवस्तु को दूर रखने का प्रयास करते नजर आते हैं। उनकी रुढ़िवादी मानसिकता उन्हें ऐसा करने से रोकती है। कक्षा प्रक्रियाओं द्वारा समाज की पुरुषसत्ता का प्रचार करना उनकी प्रच्छन्न कार्यसूची होती है। यदि जेंडर विमर्श विषयवस्तु के रूप में पाठ्यक्रम में शामिल भी होते हैं, तो इन प्रकरणों का शिक्षण इस प्रकार किया जाता हैं कि बच्चे इनके प्रति उदासीन बने रहते हैं तथा उनमें इन विमर्शों की समीक्षा करने के लिए आवश्यक ज्ञान, कौशल एवं अभिवृति का विकास नहीं हो पाता। इन विमर्शों के शिक्षण के लिए वाद-विवाद, प्रश्नोत्तरी, विचार-विमर्श, संघर्ष समाधान, भूमिका मंचन जैसे युक्तियाँ को व्यवहार में ही नहीं लाया जाता जो कक्षा को जेंडर संवेदनशील बनाने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। उदाहरण के लिए- यदि शिक्षक सामाजिक अध्ययन विषय में मानवाधिकारों के प्रसंग पर चर्चा करते हैं तो वे प्रायः महिलाओं के अधिकारों की उपेक्षा करते प्रतीत होते हैं या व्यापक रूप से इसे चर्चा का हिस्सा नहीं बनाते। उनके द्वारा प्रस्तुत उदाहरण या व्याख्यान समाज में हो रहे स्त्रियों के अधिकारों के हनन का व्यापक रूप से चित्रण कर पाने में असमर्थ होते हैं। उनके कथन या प्रस्तुत तथ्य उनके प्रच्छन्न जेंडर रुढ़िवादी दृष्टिकोण का समर्थन करते हैं। अतः मानवाधिकार जैसे प्रसंग भी जेंडर समानता की चुनौती को कक्षा में समावेशित करने में असमर्थ हो जाते हैं। कक्षा में ऐसे वातावरण का निर्माण किया जाता है जो जेंडर संवेदना शून्य होता है। शिक्षण युक्तियों के चयन तथा विषय वस्तु की प्रस्तुति में बालिकाओं की अभिरुचि तथा अभिक्षमता की अनदेखी की जाती है। उन्हें बालकों के समान अपनी समझ, जिज्ञासा, संशय तथा पृच्छा को अभिव्यक्त करने की स्वायत्तता नहीं होती। कई बार ऐसा होता है कि किसी प्रश्न का जवाब पूछे जाने पर बालकों द्वारा दिए गए जवाबों का पुनर्बलन किया जाता हैं किन्तु बालिकाओं द्वारा

दिए गए जवाबों की अनदेखी की जाती है। बालिकाओं द्वारा प्रस्तुत व्याख्या या प्रदर्शन की समुचित प्रतिपुष्टि नहीं की जाती। कक्षा में किसी अधिगम गतिविधि का संचालन करते वक्त कार्य तथा पाठ्यवस्तु का विभाजन जेंडर के आधार पर किया जाता हैं। समाज में विद्यमान जेंडररूढीयों के समान बालकों को किसी भी कक्षा गतिविधि में बालिकाओं से अधिक महत्त्व दिया जाता है। गतिविधि के नियोजन एवं रूपरेखा की तैयारी में बालकों की सहायता ली जाती है तथा बालिकाओं को अन्य सहायक कार्यों की जिम्मेदारी दी जाती है। यह बालकों में वर्चस्व का भाव पैदा करता है तथा बालिकाओं में दबकर कार्य करने की मनोवृति उत्पन्न करता है। कक्षा में बालकों के भावुक हो जाने या किसी प्रश्न का उत्तर देते वक्त भयभीत होने की स्थिति में उन्हें कई बार यह कह कर डांटा जाता है कि क्या वे बालिकाएँ हैं जो उनके समान डर या रो रहे हैं। शिक्षकों का ऐसा व्यवहार बालिकाओं के मन में डर या हिचकिचाहट की प्रवृत्ति जो पारिवारिक या सामाजिक माहौल से ही बनी रहती है,उसका पुनर्बलन करता है। यदि कोई स्त्रीवादी विमर्श या बालिकाओं के सामाजिक अस्मिता से जुड़ी चुनौती कक्षा के समक्ष खड़ी होती हैं तो वे बालिकाओं के प्रसंग को अनदेखा करने की कोशिश में लग जाते हैं, जिससे बच्चे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में स्त्रियों की बदलती भूमिका का अवबोध नहीं कर पाते। उदाहरण के लिए- जब 'समाज का बदलता आईना' जैसे प्रसंग कक्षा में पढ़ाये जाते हैं तो शिक्षक जानबूझ कर या अनजाने ही सही महिला वैज्ञानिकों, महिला शिक्षाविदों तथा महिला समाजिक कार्यकर्ताओं के प्रसंग को चर्चा का हिस्सा नहीं बनाते या अव्यापक रूप से इसे चर्चा में सम्मिलित किया जाता है जिससे बच्चों में जेंडर समानता के प्रति उदासीनता बनी रहती है। साथ-ही-साथ बालिकाओं द्वारा अपने रूढीवादी समाजिक अस्मिता से परे जब कोई कार्य किया जाता है, तो यह कहकर उन्हें यह झिड़क दिया जाता है कि वे बालिकाएँ हैं तथा उन्हें ऐसा कार्य करना शोभा नहीं देता। उदाहरण के लिए- जब किसी कक्षा गतिवधि में प्रस्तुति की पहल बालिकाओं द्वारा करने का प्रयास किया जाता है तो कई बार शिक्षक उन्हें यह कहकर बैठा देते हैं कि पहले वे बालकों को समुचित रूप से देखें कि किस प्रकार प्रस्तुति की जानी चाहिए और उसके बाद अपनी प्रस्तुति दें। इस प्रकार वे समाज के रुढ़िवादी पुरुषसत्ता को पुनर्बलन करते नजर आते हैं

इस प्रकार कक्षा प्रक्रियाएँ जहाँ एक ओर समाज में स्त्रियों की बदलती भूमिका के प्रति बच्चों का ध्यान आकर्षित करने में असमर्थ हैं, वहीँ दूसरी ओर वे समाज के जेंडररुढियों का प्रबलन भी करती हैं।

अपने प्रगति की जांच करें 4

4. "विद्यालयों का प्रच्छन्न पाठ्यक्रम जेंडर संवेदनशीलता के स्थान पर जेंडररुढियों का प्रबलन करता है।" इस कथन पर अपने विचार प्रस्तुत करें।

....

....

4.4 जेंडर संवेदनशील शिक्षाशास्त्र, जेंडर की दृष्टि से विद्यालयी अनुभवों पर मनन एवं युक्तियाँ, शिक्षकों की संवेदनशीलता

जेंडर संवेदनशील शिक्षाशास्त्र एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था पर बल देता है जिससे बालिकाओं, शिक्षिकाओं व अन्य महिला कर्मियों के अधिकारों को संवर्धित किया जा सके ताकि वे विद्यालय के विभिन्न क्रियाकलापों में क्रमशः बालकों, शिक्षकों व अन्य पुरुष कर्मियों के समान सुविधायें एवं अवसर प्राप्त कर सकें।

यह लिंगों की समानता के आधार पर बालिकाओं, शिक्षिकाओं तथा अन्य महिला कर्मियों के अधिकारों की वकालत करता है। कक्षा गतिविधियों या अन्य विद्यालय गतिविधियों में बालिकाओं के अधिकारों को सुरक्षित करने का प्रयास किया जाता है जिससे उनमें शिक्षक तथा विद्यालय के प्रति सौहार्दता का भाव बना रहे। यह बालिकाओं की अभिव्यक्ति को उचित रूप से सुने जाने पर बल देता है ताकि वे अपनी सामाजिक अस्मिता एवं वास्तविक क्षमताओं में तुलना कर सकें।

जेंडर संवेदनशील शिक्षाशास्त्र स्त्रीवादी विचारधारा से स्वयं को जोड़ने का प्रयास करता है ताकि शिक्षा की व्यवस्था दोनों ही लिंगों के लिए समान रूप से संवेदनशील बनायी जा सके। यह विचारधारा किसी पर थोपी नहीं जाती वरन बालिकाओं के लिए सक्रिय सहभागिता तथा अपनी क्षमताओं के प्रयोग के व्यापक अवसर प्रदान कर उन्हें शिक्षकों तथा बालकों के साथ कंधे-से-कंधा मिलाकर विभिन्न विद्यालयी एवं कक्षा संबंधी समस्याओं के समाधान के लिए उत्तरदायी बनाया जाता है, जिससे उनमें आत्मविश्वास एवं सशक्त होने का भाव पैदा होता है।

विद्यालयों में जेंडर संवेदनशील शिक्षा व्यवस्था सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है कि विद्यालय के विभिन्न गतिविधियों या अनुभवों को स्त्रीवादी दृष्टिकोण से पुनर्गठित किया जाय। इन अनुभवों द्वारा बालिकाओं को यह एहसास कराया जाना चाहिए कि स्त्रियाँ समाज के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के समान सक्षम हैं तथा उनके पास पुरुषों के समान जीवन जीने के कई विकल्प हैं।

कक्षा अधिगम वातावरण: कक्षा में ऐसे वातावरण का निर्माण किया जाना चाहिए जो जेंडर समावेशी हो। जहाँ बालिकाओं को बालकों के समान अपने अभिरुचि तथा अभिक्षमता के आधार पर अधिगम अनुभवों के चयन तथा संगठन की स्वायत्तता हो। उनकी अभिव्यक्ति को बालकों के समान प्राथमिकता दी जाय ताकि वे अपनी क्षमता की पहचान कर उसका विकास कर सकें। कक्षा में बालकों के साथ-साथ बालिकाओं की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर अधिगम युक्तियों का निर्धारण किया जाना चाहिए ताकि बालिकाएँ अपनी जिज्ञासा एवं संशय को बिना किसी डर एवं हिचकिचाहट के शिक्षकों एवं अन्य विद्यार्थियों के समक्ष रख सकें। स्त्रीवादी विमर्शों तथा बालिकाओं के सामाजिक अस्मिता से जुड़ी चुनौतियों को पाठ-प्रसंग के रूप में एकीकृत कर बालिकाओं को अपनी पाठ-संबंधी समस्याओं एवं

व्यक्तिगत समस्याओं के समाधान के लिए तैयार किया जा सकता है। बालिकाओं तथा बालकों दोनों को इन पाठ-संबंधी प्रसंगों पर विचार-विमर्श, वाद-विवाद, प्रश्नोत्तरी, संघर्ष समाधान, भूमिका मंचन, घटना विवरण एवं कहानी कथन का हिस्सा बनाकर जेंडर समानता के प्रति जागरूक एवं संवेदनशील बनाया जा सकता है।

शिक्षण-अधिगम सामग्री: शिक्षकों द्वारा तैयार किये गये शिक्षण-अधिगम सामग्री की भाषा, जेंडर-शून्य होनी चाहिए या स्त्री एवं पुरुष दोनों रूपों को व्यवहार में लाना चाहिए। अधिगम सामग्री में स्त्री एवं पुरुष के उदाहरण, फोटो एवं चित्र समान रूप से दिखाई देने चाहिए। समान श्रेणीबद्ध स्तर पर तथा गैर-रुढ़िवादी भूमिकाओं में स्त्री एवं पुरुष के उदाहरण, फोटो एवं चित्र भी दिखाई देने चाहिए। किसी विमर्श को लेकर स्त्री एवं पुरुष दोनों की सोच या विचार को प्रस्तुत करना चाहिए।

पाठ-सहगामी गतिविधियाँ: पाठ-सहगामी गतिविधियों में बालिकाओं एवं बालकों दोनों की सक्रिय सहभागिता सुनिश्चित की जानी चाहिए। स्त्रीवादी विमर्शों को विभिन्न पाठ-सहगामी गतिविधियों जैसे वाद-विवाद, नाटक, कहानियाँ, कविता-पाठ, प्रश्नोत्तरी, निबंध प्रतियोगिता, विद्यार्थी क्लब गतिविधियाँ आदि का हिस्सा बनाकर बालकों एवं बालिकाओं दोनों को इन गतिविधियों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। उनमें यह भाव पैदा किया जाना चाहिए कि स्त्री एवं पुरुष दोनों में क्षमताओं का भरमार है तथा वे जीवन के हर क्षेत्र में चुनौतियों का सामना करने के लिए सक्षम हैं। इन गतिविधियों के आयोजन की जिम्मेदारी समान रूप से बालकों एवं बालिकाओं को दी जानी चाहिए, जिससे उनमें नेतृत्व, पारस्परिक सहयोग एवं सामंजस्य क्षमता का विकास हो सके।

विद्यालय प्रशासन एवं प्रबंधन: शिक्षिकाओं को शिक्षकों के समान विद्यालय प्रशासन एवं प्रबंधन में उचित स्थान दिया जाना चाहिए। उन्हें विद्यालय से जुड़े किसी भी पक्ष के संबंध में निर्णय लेने की प्रक्रिया में समान रूप से साझेदार बनाया जाना चाहिए। विद्यालय के किसी भी कार्यक्रम जैसे- वार्षिकोत्सव, संगोष्ठी, सेमीनार, कार्यशाला, भूतपूर्व छात्रों का सम्मलेन आदि के नियोजन एवं संगठन की जिम्मेदारी शिक्षिकाओं एवं शिक्षकों तथा बालिकाओं एवं बालकों को समान रूप से दी जानी चाहिये। विभिन्न विद्यालयी गतिविधियों के संचालन में जेंडर के आधार पर किसी भी प्रकार का भेद-भाव नहीं किया जाना चाहिए। शिक्षक एवं शिक्षिकाओं के बीच कार्य-भार का उचित रूप से विभाजन किया जाना चाहिए। कार्य की प्रकृति तथा उससे जुड़ी जेंडररुढियों के आधार पर शिक्षक एवं शिक्षिकाओं में भेदभाव नहीं किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए- संगोष्ठी के आयोजन के लिए कक्षा की सजावट या अतिथियों के स्वागत की जिम्मेदारी केवल शिक्षिकाओं एवं बालिकाओं को ही नहीं होनी चाहिए वरन शिक्षिकों तथा बालकों को भी इसका हिस्सेदार बनाया जाना चाहिए। वहीँ दूसरी ओर संगोष्ठी के तकनीकी पक्षों में शिक्षिकाओं

एवं बालिकाओं की भागीदारी भी तय की जानी चाहिए। विद्यार्थी अभिशासन में बालिकाओं एवं बालकों दोनों को सामान रूप से साझेदार बनाना चाहिए। इसके रूपरेखा के निर्धारण एवं क्रियान्वयन का दायित्व दोनों को समान रूप से दिया जाना चाहिए। बच्चों के प्रवेश एवं उस्थिति रिकॉर्ड, अनुशासन एवं उपलब्धि रिपोर्ट आदि तैयार करने की जिम्मेदारी शिक्षक एवं शिक्षिकाओं को समान रूप से दी जानी चाहिए। इस प्रकार विद्यालय प्रशासन में शिक्षिका एवं बालिकाओं की साझेदारी तय कर विद्यालय व्यवस्था को जेंडर समावेशी बनाया जा सकता है।

शिक्षकों की भर्ती: शिक्षकों की भर्ती का आधार जेंडर न होकर उनकी विषय विशेष में निपुणता होनी चाहिए। विज्ञान तथा गणित विषयों के शिक्षण के लिए स्त्री एवं पुरुष दोनों के आवेदन स्वीकार किये जाने चाहिए। साथ-ही-साथ भाषा, संगीत एवं कला जैसे विषयों के शिक्षण के लिए केवल स्त्रियों का चयन न कर इस क्षेत्र में निपुण पुरुष अभ्यर्थियों की भी भर्ती की जानी चाहिए। प्राथमिक विद्यालय स्तर पर शिक्षण के लिए स्त्री एवं पुरुष दोनों अभ्यर्थियों को बिना किसी जेंडर भेद के समान रूप से स्थान दिया जाना चाहिए।

शिक्षकों एवं बच्चों को दी जानेवाली सुविधाएँ

विद्यालयों में शिक्षिका एवं बालिकाओं के लिए शिक्षक एवं बालकों के समान भौतिक एवं आर्थिक सुविधाएँ प्रदान की जानी चाहिए। शिक्षकों एवं बालिकाओं के लिए अलग से प्रसाधन कक्ष की व्यवस्था होनी चाहिए। विद्यालय में खाली समय में आराम करने तथा भीतरी खेलों के लिए महिला स्टाफ रूम तथा छात्रा कक्ष की व्यवस्था होनी चाहिए। पुस्तकालय में बालकों एवं बालिकाओं दोनों के लिए बैठकर पढने की व्यवस्था होनी चाहिए। स्त्रीवादी विमर्शों से जुड़ी कहानियों एवं कविताओं के पुस्तक तथा महिला वैज्ञानिकों तथा राजनीतिज्ञों के जीवन वृत्तांत भी उपलब्ध होने चाहिए। शिक्षक एवं बालकों के साथ-साथ शिक्षिका एवं बालिकाओं के लिए भी जिम्नेजियम की व्यवस्था होनी चाहिए, जिससे वे भी शारीरिक तथा मानसिक रूप से स्वस्थ रह सकें तथा समस्त विद्यालय का वातावरण स्वस्थ तथा सक्रिय हो। खेल के मैदान में बालक एवं बालिकाओं दोनों के लिए विभिन्न प्रकार के बाहरी खेलों को खेलने की व्यवस्था होनी चाहिए। बालिकाओं तथा बालकों दोनों को बिना किसी लिंग भेद के विभिन्न खेलों में हिस्सा लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। बालक एवं बालिकाओं दोनों के लिए समान सुविधा वाले अलग-अलग छात्रावास की सुविधा होनी चाहिए, ताकि विद्यालय में दोनों के प्रवेश तथा अवधारण को समान रूप से बढ़ावा दिया जा सके। कैंटीन में शिक्षक एवं बालक तथा शिक्षिका एवं बालिकाओं दोनों के लिए स्वास्थ्यवर्धक एवं ताजा खाने की व्यवस्था होनी चाहिए। मध्याहन भोजन में किसी प्रकार लिंग भेद नहीं होना चाहिए। उनकी आवश्यकता तथा पसंद के अनुसार भोजन की व्यवस्था होनी चाहिए। शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के वेतन में किसी प्रकार का भेद नही होना चाहिए। बालक एवं बालिकाओं दोनों के

लिए छात्रवृति की सुविधा होनी चाहिए तथा यह सुविधा उनके मेधा के आधार पर दी जानी चाहिये न कि उनके लिंग के आधार पर। शिक्षक सम्मान एवं प्रोत्साहन के लिए शिक्षको एवं शिक्षिकाओं दोनों को समान रूप से उनके प्रतिभा तथा प्रदर्शन के आधार पर चुना जाना चाहिए।

शिक्षक एवं बच्चों के बीच संबंध: शिक्षकों एवं बच्चों के बीच सौहार्दपूर्ण रिश्ता होना चाहिए। इस रिश्ते का आधार कर्तव्यनिष्ठता, स्नेह तथा विश्वास होना चाहिए न कि किसी जेंडर विशेष के प्रति आसक्ति। शिक्षकों को बालिकाओं की आवश्यकता एवं समस्याओं के प्रति सहानुभूति होनी चाहिए तथा उन्हें बालकों के समान विभिन्न विद्यालय गतिविधियों में भागीदारी का अवसर प्रदान करना चाहिए। साथ-ही-साथ शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के बीच भी सौहार्दपूर्ण रिश्ता होना चाहिए। दोनों को एक-दूसरे के विचारों एवं भावनाओं का सम्मान करना चाहिए। इससे विद्यालय में जेंडर समानता के लिए अनुकूल वातावरण का निर्माण होता है।

शिक्षकों की संवेदनशीलता: किसी भी विद्यालय में जेंडर संवेदनशील पाठ्यचर्या का सफल रूप से संचालन तभी हो सकता है जब वहाँ के शिक्षक भी जेंडर संवेदनशील हो, अर्थात् वे बिना किसी लिंग भेद के बालिका एवं बालक दोनों के साथ समान रूप से स्नेहपूर्ण व्यवहार करें। शिक्षकों को बालिकाओं की संवेदना एवं अभिव्यक्ति को अपने शिक्षण अभ्यास में व्यापक स्थान देना चाहिए। उन्हें स्त्रीवादी विमर्शों तथा महिलाओं के विभिन्न क्षेत्रों में सफलता को पाठ्यवस्तु का अहम हिस्सा बनाना चाहिए तथा उनके द्वारा पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण बालक एवं बालिका दोनों के लिए समान रूप से रोचक तथा स्पष्ट होना चाहिए। शिक्षकों को बालक एवं बालिका दोनों की अधिगम आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर अधिगम अनुभवों को संगठित करना चाहिए। उन्हें बालक एवं बालिका के बीच संवाद को बढ़ावा देना चाहिए ताकि वे अपने रुढ़िवादी सामाजिक अस्मिता तथा अपने कार्य करने की परिस्थितियों की आलोचना कर सकें। उन्हें कक्षा में जेंडर-शून्य भाषा या ऐसी भाषा, जिसमें स्त्री एवं पुरुष दोनों रूप हो, व्यवहार में लाना चाहिए। कक्षा में किसी भी विमर्श को लेकर स्त्री एवं पुरुष दोनों के उदाहरण, सोच या विचार को प्रस्तुत करना चाहिए। उन्हें बालक एवं बालिका दोनों के लिए समान रूप से गहन एवं सकारात्मक प्रतिक्रया देनी चाहिए। यदि किसी बालिका या बालक का कार्य उसे अपने रुढ़िवादी सामाजिक भूमिका के परे किसी गैर रुढ़िवादी भूमिका की ओर ले जाता है तो उसे इस कार्य के लिये प्रोत्साहित करना चाहिए। साथ-ही-साथ उन्हें अपने शिक्षण का जेंडर समानता के दृष्टिकोण से स्व-मूल्यांकन भी करना चाहिए।

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट है कि विद्यालयी गतिविधियों में बालक एवं बालिका दोनों की भागीदारी सुनिश्चित कर विद्यालयी अनुभवों को जेंडर संवेदनशील बनाया जा सकता है।

अपने प्रगति की जांच करें 5

5. जेंडर संवेदनशीलता को बढ़ावा देने के लिए कक्षा अधिगम वातावरण किस प्रकार का होना चाहिए? संक्षेप में बताएँ

....

....

6. विद्यालय परिवेश को संवेदनशील बनाने में शिक्षक की भूमिका का वर्णन करें

....

....

4.5 सारांश

विद्यालयों में बच्चों को जेंडर असमानता के प्रति जागरूक करने के लिए विद्यालयी अनुभवों का स्त्रीवादी उन्मुखीकरण कर उनमें समाज के जेंडररुढियों के प्रति आलोचनात्मक समझ पैदा की जानी चाहिए। विभिन्न विद्यालय गतिविधियों एवं कक्षा प्रक्रियाओं में बालकों एवं बालिकाओं के बीच उनकी भागीदारी एवं भूमिका में शिक्षकों तथा विद्यालय प्रशासन द्वारा कई बार भेद-भाव किया जाता है जो कहीं-न-कहीं समाज में प्रचलित जेंडर असमानता का प्रबलन करती है। अतः यह आवश्यक है कि जेंडर संवेदनशील पाठ्यचर्या का गठन किया जाय ताकि बच्चों में आवश्यक ज्ञान, कौशल एवं अभिवृत्ति का विकास हो जिससे वे अपने रुढ़िवादी जेंडर अस्मिता की समीक्षा कर सकें।

4.6 अपने प्रगति की जाँच के लिए अपेक्षित उत्तर

प्रश्न क्रमांक 1 के लिए उप-इकाई 4.2.1 देखें।

प्रश्न क्रमांक 2 के लिए उप-इकाई 4.2.2 देखें।

प्रश्न क्रमांक 3 के लिए उप-इकाई 4.2.3 देखें।

प्रश्न क्रमांक 4 के लिए उप-इकाई 4.3 देखें।

प्रश्न क्रमांक 5 एवं 6 के लिए उप-इकाई 4.4 देखें।

4.7 अभ्यास प्रश्न

1. विद्यालय अनुभवों की स्त्रीवादी दृष्टि से व्याख्या करें।

2. जेंडर के सन्दर्भ में विद्यालय के प्रच्छन्न पाठ्यक्रम की समीक्षा करें।

3. विद्यालय परिवेश को जेंडर संवेदनशील बनाने के लिए शिक्षक एवं बच्चों के बीच किस प्रकार का संबंध होना चाहिए? उदाहरण सहित बताएँ।

4.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- जोहरी, डी. (2016). जेंडर, स्कूल तथा समाज. प्रथम संस्करण, मेरठ: आर. लाल बुक डिपो।
- बिस्वान, टी. (2009). मानवाधिकार जेंडर एवं पर्यावरण. दिल्ली: विवा बुक्स प्राइवेट लिमिटेड।
- मिश्रा,एस.के. एवं मिश्रा, ए. (2016). लिंग, विद्यालय और समाज. प्रथम संस्करण, मेरठ: आर. लाल बुक डिपो।
- 'शिक्षा में जेंडर विमर्श' राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार-पत्र (2008). नई दिल्ली: एन.सी.आर.टी.।